योगविद्या

वर्ष 2 अंक 10
अक्टूबर 2013
सदस्यता डाकखर्च – रु 50

स्वर्ण जयन्ती

बिहार योग विद्यालय
के 50 वर्ष

बिहार योग विद्यालय, मुंगेर, बिहार, भारत

हरि ॐ

योग विद्या का सम्पादन, मुद्रण और प्रकाशन स्वामी सत्यानन्द सरस्वती के संन्यासी शिष्यों द्वारा स्वास्थ्य लाभ, आनन्द और प्रकाश प्राप्ति के इच्छुक व्यक्तियों के लिए किया जाता है। इसमें बिहार योग विद्यालय, बिहार योग भारती, योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट तथा योग शोध संस्थान के क्रियाकलापों की जानकारियाँ प्रकाशित की जाती हैं।

सम्पादक – स्वामी शक्तिमित्रानन्द सरस्वती

योग विद्या मासिक पत्रिका है। देर से सदस्यता ग्रहण करने पर भी उस वर्ष के जनवरी से दिसम्बर तक के सभी अंक भेजे जाते हैं।

बिहार योग विद्यालय, गंगादर्शन, फोर्ट, मुंगेर, 811201, बिहार, द्वारा प्रकाशित।

थॉमसन प्रेस इण्डिया लिमिटेड, फरीदाबाद, 121007, हरियाणा में मुद्रित।

© Bihar School of Yoga 2013

पत्रिका की सदस्यता एक वर्ष के लिए पंजीकृत की जाती है। कृपया अपने आवेदन अथवा अन्य पत्राचार निम्नलिखित पते पर करें –

बिहार योग विद्यालय
गंगा दर्शन,
फोर्ट, मुंगेर, 811201
बिहार

✉ अन्य किसी जानकारी हेतु स्वयं का पता लिखा और डाक टिकट लगा हुआ लिफाफा भेजें, जिसके बिना उत्तर नहीं दिया जायेगा।

कवर फोटो : श्री स्वामी सत्यानन्द सरस्वती, 1965

अन्दर के रंगीन फोटो : 1-4: विश्व योग सम्मेलन, मुंगेर 1973; 5-8: विश्व योग सम्मेलन, मुंगेर 1993;

आध्यात्मिक मार्गदर्शन

'फिर भी'

लोग अविवेकी, असंगत एवं स्वार्थी होते हैं। फिर भी उन्हें प्यार करो।

भलाई के रास्ते पर चलते हुए लोग तुम पर स्वार्थ और दुर्भावना का दोषारोपण करेंगे। फिर भी उनकी भलाई करो।

जो अच्छाई तुम आज करते हो, वह कल भुला दी जाएगी। फिर भी अच्छाई करो।

लोग दलितों की तरफदारी करते हैं, परन्तु अनुसरण करते हैं अमीरों का। फिर भी दलितों के लिए संघर्षरत रहो।

जो तुमने कई वर्षों में बनाया है, वह एक रात में नष्ट हो सकता है। फिर भी निर्माण करो।

जो तुम्हारे पास सर्वोत्तम है, उसे संसार को देने पर भी लोग तुम्हें अपमानित करेंगे। फिर भी संसार को अपनी श्रेष्ठतम उपलब्धि दो।

– श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती

बिहार योग विद्यालय, गंगादर्शन, फोर्ट, मुंगेर-811201, बिहार के लिए स्वामी ज्ञानभिक्षु सरस्वती द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित
मुद्रक – थॉमसन प्रेस इण्डिया लिमिटेड, 18/35 माइलस्टोन, दिल्ली मथुरा रोड, फरीदाबाद-121007, हरियाणा
स्वामित्व – बिहार योग विद्यालय **सम्पादक** – स्वामी शक्तिमित्रानन्द सरस्वती

BIHAR SCHOOL OF YOGA
50 years
1963–2013
GOLDEN JUBILEE

योगविद्या

वर्ष 2 अंक 10 · अक्टूबर 2013
(प्रकाशन का 51 वाँ वर्ष)

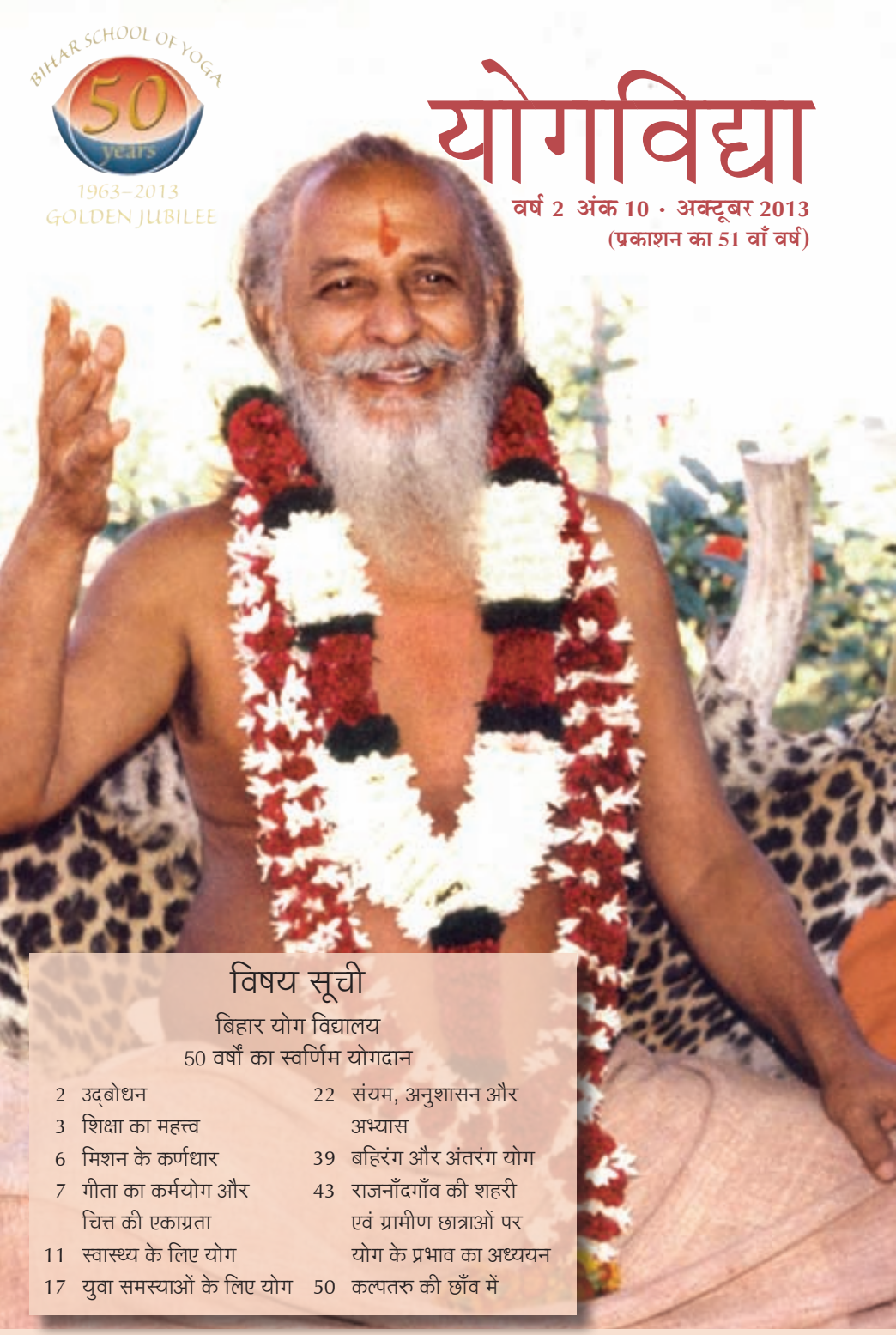

विषय सूची

बिहार योग विद्यालय
50 वर्षों का स्वर्णिम योगदान

2 उद्‌बोधन
3 शिक्षा का महत्त्व
6 मिशन के कर्णधार
7 गीता का कर्मयोग और चित्त की एकाग्रता
11 स्वास्थ्य के लिए योग
17 युवा समस्याओं के लिए योग
22 संयम, अनुशासन और अभ्यास
39 बहिरंग और अंतरंग योग
43 राजनाँदगाँव की शहरी एवं ग्रामीण छात्राओं पर योग के प्रभाव का अध्ययन
50 कल्पतरु की छाँव में

तपस्विभ्योऽधिको योगी ज्ञानिभ्योऽपि मतोऽधिक:। कर्मिभ्यश्चाधिको योगी तस्माद्योगी भवार्जुन ॥

उद्‌बोधन

ओ मानव!
किसको ढूँढता है तू
क्यों मारा मारा फिरता है तू
घने जंगलों में और पर्वतों में
अंधेरे में क्यों भटक रहा है
जिसको तू ढूँढता है,
वह तो तू स्वयं ही है।
इस परदे को फाड़ दे
इस अंधेरे को चीर दे
और तू क्या है।

ओ भाई,
तेरी दशा उस बुढ़िया-सी है
जिसकी सुई घर में खो गई
पर वह ढूँढ रही थी गली में
क्योंकि उसके घर में अंधेरा था।
जिसको तू ढूँढता है वह तुझ ही में है
पर तू उसे देख नहीं सकता
अज्ञान के अंधेरे को चीर दे
और देख कि वह क्या है, कहाँ है?

– स्वामी शिवानन्द सरस्वती

शिक्षा का महत्त्व

स्वामी शिवानन्द सरस्वती

शिक्षा मूल है। संस्कृति पुष्प है। ज्ञान फल है। शिक्षा ज्ञान के वास्तविक स्वरूप की उज्ज्वलता का संवर्द्धन करती है। यथार्थ में शिक्षा ही मानव को सच्चा बनाती है। शिक्षा वही है, जो व्यक्ति का चरित्र निर्माण कर उसे सच्चा मानव बना सके, जो बालक-बालिकाओं की अन्तर्निहित शक्तियों तथा उनके नैतिक, बौद्धिक, शारीरिक और आध्यात्मिक जीवन का विकास कर सके। मस्तिष्क, हृदय व हाथ, अर्थात् बुद्धि, भावना व कर्म – तीनों का कलात्मक, वैज्ञानिक तथा व्यावहारिक विकास होना चाहिए। शरीर, मन तथा आत्मा की समन्वित उन्नति अनिवार्य है। तब कहीं विकास शीघ्र हो पाएगा।

शिक्षा वही है, जो 'सादा जीवन उच्च विचार' पर बल दे और विद्यार्थी को अपने आस-पास के वातावरण के अनुरूप ढाले तथा उसे जीवन का सामना करने और आत्म-साक्षात्कार के लिए अपेक्षित सहायता प्रदान करे। शिक्षा का उद्देश्य विद्यार्थी को निर्भयता, नम्रता, सत्य, नैतिकता और दया की शिक्षा देना होना चाहिए। शिक्षा विद्यार्थी को सद्व्यवहार, शुभ विचार, सदाचार, सत्कर्म, आत्म-त्याग तथा आत्म-साक्षात्कार का अभ्यास कराने वाली होनी चाहिए। वास्तविक शिक्षा वही कहला सकती है, जो ईश्वर तथा मानव सेवा के साथ सदाचार के संस्कार डालने वाली हो।

अन्ततोगत्वा शिक्षा का उद्देश्य प्रत्येक मनुष्य के अन्तर्निहित दिव्यत्व को प्रकाशित करना है। वास्तविक शिक्षा तथा संस्कृति की पराकाष्ठा परमानन्द-प्राप्ति है। मात्र उपदेशों और व्याख्यानों से वास्तविक शिक्षा प्रदान नहीं की जा सकती। स्कूलों एवं कॉलेजों में दृढ़ आध्यात्मिक अनुशासन की आवश्यकता है। आदर्श महापुरुष आदर्श संस्थाओं की आदर्श शिक्षा की ही उपज होते हैं।

आध्यात्मिक शिक्षा की आवश्यकता

जो शिक्षा प्रणाली जीवन के अंतिम लक्ष्य का पूर्णतया बोध न करा सके तथा जीवन में क्या प्राप्त करना है, उसका ज्ञान न दे सके, वह न तो संतोषजनक है और न ही लाभदायक सिद्ध हो सकती है। शिक्षा को ऐसे जीवन की तैयारी करानी चाहिए, जिसमें नेक आचार की प्रमुखता रहे। अनैतिक, संयमरहित बुद्धि मानव के लिये हानिकारक होती है। बुद्धिमान् किंतु चरित्रहीन मनुष्य अपने तथा अपने साथी-सहयोगियों के लिये अभिशाप है। सुन्दर स्वास्थ्य एवं बौद्धिक क्षमता वाले स्त्री-पुरुषों में यदि नैतिक अनुशासन नहीं है, तो उनके हृदय में निर्धनों के लिए बिल्कुल दया

नहीं होगी। न ही उनमें अपने से बड़ों तथा विद्वानों के लिए आदर की भावना उपजेगी। ऐसे मनुष्यों के लिये जीवन का कुछ भी मूल्य नहीं रहेगा।

शिक्षा वही है, जो मनुष्य को शक्तिशाली, शुद्धहृदयी और चरित्रवान् बना सके। यह महान् उत्तरदायित्व अभिभावकों, शिक्षकों तथा प्रोफेसरों का है कि वे आदर्श पुरुष और नारियाँ तैयार करें। आधुनिक शिक्षा प्रणाली में कुछ भी ऐसा नहीं है, जिससे नवयुवकों तथा नवयुवतियों का चरित्र सुदृढ़ बन पाए। कोई भी बालक अथवा बालिका तब तक सुशिक्षित नहीं कहला सकती, जब तक उसे आध्यात्मिक मूल्यों का सम्यक् ज्ञान न हो। आध्यात्मिक शिक्षा ही प्राण है। यही सामाजिक जीवन का मौलिक तत्त्व है और इसी से आज की युवा पीढ़ी वंचित है। यदि विद्यालयों में आध्यात्मिक शिक्षा न दी गई, तो भविष्य के नागरिक नास्तिक तथा अनीश्वरवादी होंगे।

आजकल के विद्यार्थियों के सम्मुख कोई आदर्श है ही नहीं। वे जीवनयापन के लिये थोड़ा-बहुत ज्ञान अर्जित कर लेते हैं। वेतन के लिए कुछ विद्या ग्रहण कर लेते हैं। लेकिन पाठ्यक्रम में आध्यात्मिक तथा नैतिक शिक्षा के अभाव के कारण वे चरित्रहीन और उद्दण्ड हो रहे हैं।

वर्तमान के स्कूल-कॉलेज के विद्यार्थियों तथा पुरातन काल के गुरुकुल के विद्यार्थियों में महान् अन्तर है। ऋषिगण सिखाते थे – सदा सत्य बोलो, अपने कर्त्तव्य का पालन करो, सदैव वेदों का अध्ययन करो, सद्मार्ग से कभी च्युत न होना, कर्त्तव्यपालन से कभी मुख न मोड़ना, अपनी कल्पनाओं की अपेक्षा न रखना, अपनी उन्नति के लिये डटे रहना, वेदों की शिक्षा का उल्लंघन न करना, ईश्वर तथा अपने पूर्वजों के प्रति अपने धर्म का निर्वाह करना। मातृ देवो भव, पितृ देवो भव, आचार्य देवो भव, अतिथि देवो भव। निन्दनीय कर्म कभी मत करना, केवल पुण्य कार्यों में रत रहना।

गुरुकुल का प्रत्येक विद्यार्थी योग, आसन, प्राणायाम आदि को भली प्रकार जानता था। स्मृतियों, गीता, रामायण तथा उपनिषदों का स्वाध्याय करता था। प्रत्येक विद्यार्थी नम्र, संयमी, आज्ञाकारी, आत्म-निग्रही, बलिदानी, सेवाशील, सदाचारी, सुशील और सबसे बढ़कर, आत्मज्ञान का जिज्ञासु रहता था। गुरुकुल के प्रत्येक विद्यार्थी का जीवन पवित्र और नैतिक गुणों से सम्पन्न होता था। प्राचीन संस्कृति का यही महान् लक्षण था।

शिक्षा-पद्धति की पुनर्व्यवस्था

भारत की वर्तमान शिक्षा-पद्धति में शीघ्र ही आमूल सुधार आवश्यक है। हमारे स्कूल तथा कॉलेज मुनाफे-घाटे के केन्द्र बनकर रह गए हैं। हमारे स्नातक धन, मान, विलासिता तथा उपाधियों के पीछे भाग रहे हैं। आज का युवा-मन

अवांछनीय साहित्य से दुष्प्रभावित हो रहा है।

शिक्षा का स्वरूप विखंडित हो गया है। इसमें न समन्वय रहा, न ही सम्पूर्णता अथवा सम्पन्नता। प्राचीन गुरुकुल प्रथा को पुन: लाना होगा। समय की माँग के अनुसार उसकी पुनर्व्यवस्था करनी होगी, ताकि छात्र उसका पूरा-पूरा लाभ उठा सकें।

दैनिक शिक्षा का आरम्भ तथा समाप्ति सामूहिक प्रार्थना, लघु ध्यान तथा सामान्य मन्त्र-पाठ से होनी चाहिए। प्रतिदिन छात्रों को सार्वभौमिक सिद्धान्तों पर आधारित शास्त्रों से कुछ पाठ करना चाहिए। ऐसी कहानियाँ भी पढ़नी चाहिए जो नैतिक गुणों की प्रेरणा दे सकें। सन्तों, ज्ञानियों तथा शूरवीरों के प्रसंग भी छात्रों के लिए प्रेरणादायक हो सकते हैं। छात्रों के लिये ये सब उदात्त भावों से युक्त वातावरण उत्पन्न करने में सहायक रहेंगे। उनके हृदय में दिव्य गुणों की दृढ़ नींव पड़ जाएगी। परिणामत: वे उत्तम नागरिक बनेंगे।

शिक्षा सभ्यता को बना भी सकती है और बिगाड़ भी सकती है। विश्वविद्यालय यथार्थ में राष्ट्र की सभ्यता तथा संस्कृति के रक्षक हैं। यदि मनुष्य में आन्तरिक सुधार न हो तो हर तरह का कानून धरा रह जाएगा। आध्यात्मिक शिक्षा द्वारा न केवल मानव मात्र का, बल्कि राष्ट्र तथा सम्पूर्ण विश्व का परम कल्याण होगा।

येषां न विद्या न तपो न दानं
ज्ञानं न शीलं न गुणो न धर्म:।
ते मर्त्यलोके भुवि भारभूता
मनुष्यरूपेण मृगाश्चरन्ति ॥

विद्या, तप, दान, ज्ञान, शील, धर्म आदि से विहीन लोग वस्तुत: मनुष्य-रूपधारी पशु हैं। धरती पर बोझ स्वरूप उनका जीवन सचमुच निरर्थक है।

– *नीतिशतकम्*

मिशन के कर्णधार

एक बड़े जमींदार ने एक भव्य महल बनवाया। अपनी धन-दौलत दिखाने के लिये उसने पूरे महल को मँहगी कलाकृतियों और सुन्दर शिल्पकला से सजवाया। जल्द ही महल बनकर तैयार हो गया। महल का उद्घाटन समारोह बड़े धूमधाम से मनाया गया। जमींदार ने समारोह में बहुत लोगों को आमंत्रित किया था। कुछ लोगों ने दीवार पर टँगी सुन्दर कलाकृतियों की प्रशंसा की तो कुछ ने अद्भुत मूर्तियों को सराहा तो कुछ ने कमरों की उत्तम बनावट की प्रशंसा की। केवल महल को बनवाने वाला प्रमुख इंजीनियर चुप था।

उसे शान्त देखकर जमींदार ने पूछा, 'अरे! आप खामोश क्यों है? इस भव्य महल में, जिसकी कल्पना का श्रेय मुझे और साकार करने का श्रेय आपको जाता है, सबसे अच्छा क्या लगा?'

'क्षमा करें, महाराज,' इंजीनियर ने उत्तर दिया, 'मैं थोड़ी देर के लिए अपने विचारों में बिल्कुल खो गया था। जब मैं इस आलीशान महल के बारे में सोच रहा था तो मेरे मानस-पटल पर उन दो बैलों का दृश्य उभरा, जो दिनभर मसाला तैयार करने वाली चक्की को घुमाते रहते थे। मैं उनके योगदान और परिश्रम की सराहना करता हूँ। देखा जाए तो इस भव्य इमारत का श्रेय उन्हीं को जाता है। ये सभी वास्तुकार, शिल्पकार, कलाकार और मिस्त्री क्या करते यदि वे बैल धैर्य एवं कठिन परिश्रम से मसाला तैयार नहीं करते?'

प्राय: सभी महान् उपलब्धियों के सुन्दर और आकर्षक पक्ष ही हमें दिखाई देते हैं। भव्यता हमें प्रभावित और विस्मित कर देती है। इस चमक-दमक के बीच हम उन परिश्रमी, आत्मनिग्रही सेवकों को भूल जाते हैं, जिनकी सहायता से मिशन तैयार होता है। वास्तव में सारा श्रेय और यश तो उन्हीं को जाता है।

– स्वामी शिवानन्द सरस्वती

गीता का कर्मयोग और चित्त की एकाग्रता

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

लोगों के मन में स्वाभाविक प्रश्न उठता है कि योग आखिर कहते किसे हैं। क्या कर्म त्याग को, गृह त्याग को, जटा बढ़ाकर साधु बनने को या हठयोग की क्रियाओं को करने का नाम योग है? इसकी परिभाषा क्या है? आजकल तो जो व्यक्ति जमीन के अन्दर जड़ समाधि लेता है, तेजाब पीता है, हठयोग की कठिन क्रियाओं को करता है या भविष्य बताता है उसे ही योगी समझा जाता है। लेकिन यह भ्रम है। गीता में भगवान श्रीकृष्ण की वह वाणी, 'अर्जुन! योग में स्थिर रहकर कर्म करो', हमें वास्तविक परिभाषा की ओर इंगित करती है।

जिस प्रकार दिनभर शारीरिक श्रम करने वाला मजदूर रात्रिकाल में आराम करता है और शरीर को पुन: कार्य करने योग्य बनाता है, उसी प्रकार मनुष्य का मन भी थकता है। शरीर की ही तरह उसके भी उपचार की आवश्यकता होती है। यदि मन में अधिक अनावश्यक विचार आएँ या वह विचारशून्य हो जाए, तो दोनों ही अवस्थाओं में उसका बुरा हाल होता है। शरीर के ही जैसा मन का भी नियम है। जिस तरह अनियमित जीवन से मनुष्य का शरीर बीमार पड़ जाता है, ठीक उसी तरह अनावश्यक बातों को मन में स्थान देने से वह बीमार और कमजोर पड़ जाता है। उसे निरोग रखने के लिए स्वस्थ आदतों एवं स्वस्थ विचारों को ही प्रश्रय देना चाहिए।

योग में स्थिर रहकर कर्म करना चाहिये। इसके कुछ दिन के लगातार अभ्यास से मनुष्य का मन स्थिर हो जाता है, उसमें शक्ति आने लगती है। हठयोग के सिवा योग के और भी कई अंग हैं, जिनका अभ्यास आवश्यक है। वे हैं भक्तियोग, राजयोग एवं ज्ञानयोग। कोई भी कर्मयोगी बिना इन सब का सहारा लिए, सही मायने में कर्मयोगी नहीं बन सकता। कर्मयोगी अपने सभी नियमित कार्य करता है और साथ-ही-साथ भक्तियोग, राजयोग और ज्ञानयोग का भी अभ्यास करता है।

कर्म-मार्गी और कर्म-योगी में अन्तर है। साधारण लोग जनता की नि:स्वार्थ सेवा को ही कर्मयोग की संज्ञा दे बैठते हैं। कोई व्यक्ति यदि निष्काम भाव से किसी की सेवा करता है तो लोग उस कार्य को भी कर्मयोग कह बैठते हैं। लेकिन ऐसा करने से कोई जरूरी नहीं कि वैसे नि:स्वार्थ सेवक का मन भी मजबूत हो। उसके मन पर भी सुख-दु:ख, लाभ-हानि, जय-पराजय का प्रभाव पड़ सकता है। ऊपर कहा जा चुका है कि जो व्यक्ति अपने दैनिक कार्यों को कुशलतापूर्वक करते हुए भक्तियोग, राजयोग एवं ज्ञानयोग का अभ्यास करता है, उसके मन पर आघातों का प्रभाव नहीं पड़ता। अनासक्ति कर्ममार्गी को कर्मयोगी बनाती है। कर्मफल की आशा से विरति ही सच्ची अनासक्ति है।

कुछ लोग अनावश्यक रूप से सोचते हैं कि योग का अभ्यास कम उम्र वालों को नहीं करना चाहिये। जब मनुष्य बूढ़ा हो जाए, घर-गृहस्थी से फुर्सत मिल जाए, तब इसका अभ्यास करना चाहिये। किन्तु यदि आप इस पर गम्भीरतापूर्वक विचार करें तो यह तर्कहीन मालूम पड़ेगा। दवाई की आवश्यकता आखिर रोगी को पड़ती है न? योग का अभ्यास तो प्रत्येक व्यक्ति के लिए है। वयस्क व्यक्ति तो अनुभवी होते हैं, उनकी विचार-शक्ति प्रबल हो जाती है। लेकिन जवान व्यक्ति अधिकतर अनुशासनहीन होता है। ऐसी स्थिति में योग की आवश्यकता तो उसे ही अधिक है। योग आज मनुष्य मात्र की आवश्यकता है।

लोग समझते हैं कि योग की आवश्यकता मोक्ष, समाधि या निर्वाण के लिए ही है। पर ऐसी बात नहीं। मनुष्य अपने दैनिक कार्यों को कुशलता एवं निपुणतापूर्वक करने के लिए योग की मदद ले सकता है। जो योग में सिद्ध होने लगता है, उसका आत्मबल मजबूत हो जाता है। उसे किसी प्रकार का भय नहीं होता। वह जो कार्य करता है, ठीक ढंग से होता है।

कभी-कभी ऐसी भी शिकायतें सुनने में आती हैं कि कोई योग का अभ्यास करता है, ध्यान करता है फिर भी उसका मन कमजोर है, सिर भारी रहता है, शरीर बोझ जैसा मालूम पड़ता है, मस्तिष्क पर तनाव रहता है। यदि योगाभ्यासी की स्मरण-शक्ति या धारणा-शक्ति कमजोर हो रही है अथवा मन पर छोटी-छोटी बातों का प्रभाव लगातार पड़ रहा है तो समझना चाहिए कि योग का अभ्यास ठीक ढंग से नहीं हो रहा है। ध्यान में चित्त को हल्का करने की कोशिश करनी चाहिए।

मनुष्य अपना दैनिक कार्य करते हुए भी योग की सिद्धि प्राप्त कर सकता है। योगाभ्यास के लिए कर्मों का त्याग आवश्यक नहीं। यदि कोई सिर्फ सुबह दो घण्टे और रात्रि को एक घण्टा योग का अभ्यास करे तो उस पर कर्म के क्लेशों का असर नहीं पड़ेगा। इसमें चित्त को एकाग्र अर्थात् एक जगह स्थिर करना आवश्यक है। यह सब के लिए अधिक देर सम्भव नहीं है। यदि आप केवल पाँच मिनटों तक चित्त को एकाग्र कर सकें तो समझें कि आपने बड़ी शक्ति पा ली है। यदि पाँच मिनट चित्त एकाग्र हो जाए तो तीन घण्टों में नींद की कमी पूरी हो सकती है। लेकिन यह सब तब सम्भव है, जब इसका रोज अभ्यास किया जाए। रात को सोते समय और सुबह जगने पर इसका अभ्यास करना चाहिए। ऐसा करने से स्फूर्ति आती है।

तन्त्र-शास्त्र में एक प्रकरण आया है, जिसमें भगवती पार्वती ने भगवान शंकर से चित्त को एकाग्र करने की विधि पूछी है। तब भगवान शंकर ने भगवती पार्वती को तन्त्र के विषय में बतलाया। तन्त्र क्या है? यह एक तरीका है, विधि है। भगवान शंकर ने चित्त को एक जगह स्थिर करने को ही योग कहा है। उन्होंने पार्वती जी को इसकी एक लाख पच्चीस हजार विधियाँ बतायी हैं। इसी को तन्त्र कहते हैं। हम लोग इसे आज राजयोग के नाम से पुकारते हैं।

आधुनिक मनोवैज्ञानिकों के अनुसार चित्त के तीन स्तर होते हैं – चेतन, अवचेतन, और अचेतन। ये चेतना के तीन धरातल हैं। वेदान्त में चेतना के चार स्तर माने गये हैं – जाग्रत, स्वप्न सुषुप्ति और चौथी अवस्था है तुरीय या समाधि की। इसी चौथी अवस्था के बारे में कहा गया है 'संतों मैंने चौथा पद पाया'।

जाग्रत अवस्था उसे कहते हैं जिसमें ज्ञानेन्द्रियाँ, कर्मेन्द्रियाँ, चित्त, मन, बुद्धि और अहंकार, कुल 19 तत्त्व जीवात्मा के साथ कार्य करते हैं। स्वप्न वह अवस्था है जिसमें उपरोक्त सभी तत्त्व क्रियावान् नहीं रहते, केवल उनके संस्कार ही कार्य करते हैं। सुषुप्ति में न तो इन्द्रियाँ काम करती हैं, न ही उनके अनुभव। केवल एक आनन्द का अनुभव रहता है। सुख या दु:ख, किसी का अनुभव नहीं रहता। इसमें चेतना लय अवस्था को प्राप्त होती है। लेकिन उस अवस्था में भी चित्त चेतन रहता है। जब आदमी नींद से जगता है तो उससे पूछिए कि उसने कैसा अनुभव किया, तो कहेगा कि आनन्द का। तो फिर प्रश्न उठता है कि वैसी अवस्था में जब उसकी सब इन्द्रियाँ सो रही थीं तो आनन्द का अनुभव कौन कर रहा था? अनुभव करने वाला कोई था तब तो। उसी को चित्त कहते हैं।

जिस चित्त को आप नियन्त्रण में लाना चाहते हैं, वह आपके भीतर विचारों के रूप में, चेतना के रूप में वर्तमान है। जब वह नियन्त्रण में आ जाता है तब सुख-दु:ख आदि का अनुभव समाप्त हो जाता है। लेकिन ऐसा क्यों होता है? इसलिए कि अनुभव करने वाला ही जब नियन्त्रण में है तो अनुभव करेगा कौन! इसे चित्त की एकाग्रता कहते हैं और ऐसे ही व्यक्ति को योगी कहते हैं।

उपनिषदों ने कहा है कि योगाभ्यासी को तीनों लोकों का ज्ञान होता है। चेतना चारों आयामों में मालूम पड़ती है। योग का अभ्यास करने वाले को सब सिद्धियाँ प्राप्त हो जाती हैं। उसे किसी वस्तु के लिए रोना नहीं पड़ता। योग जीवन का कल्याण करने वाला है। जो कोई व्यक्ति योग के इस कल्याणकारी मार्ग पर जायेगा, वह दुर्गति को प्राप्त नहीं होगा। योग कदापि व्यर्थ नहीं जाता। योगाभ्यासी चाहे जिस रूप में पुनर्जन्म ले, तो भी योग करता रहेगा। लोग चाहें या न चाहें, एक-न-एक दिन योग करना ही होगा। जब तक वृत्तियाँ अन्तर्मुखी नहीं होतीं, तब तक शान्ति मिलने वाली नहीं।

वृत्तियाँ दो प्रकार की होती हैं, अन्तर्मुखी और बहिर्मुखी। बहिर्मुखी वृत्ति देखती एवं सुनती है, लेकिन अन्तर्मुखी वृत्ति केवल अपने अन्दर ही अनुभव करती है। अन्तर्मुखी वृत्ति के बारे में ही कहा गया है कि 'बिनु पद चलै सुनै बिनु काना...।' अन्तर्मुखी वृत्ति से चैन मिलता है और बहिर्मुखी से तनाव। जब भी आप कार्य करते-करते थक जायें तो केवल दो मिनट अर्थात् बीस बार उज्जायी का अभ्यास करें, फिर काम में लग जाएँ। आपको चैन का अनुभव होगा। यह मनुष्य की कार्यक्षमता को बढ़ाता है, इन्द्रिय-चंचलता को दूर करता है।

योग का सामाजिक जीवन में व्यावहारिक प्रयोग एवं उपयोग है। भगवान श्रीकृष्ण ने अर्जुन को लड़ाई के मैदान में जो गीता सुनाई, उसका यही प्रयोजन था। यह गीता उन्होंने न तो साधु-संन्यासियों को सुनाई और न ही धर्मराज युधिष्ठिर को।

योग का ज्ञान आवश्यक है ताकि हमारा कर्म उन्नत हो, चित्त एकाग्र हो, मन संतुलित हो, सम भावना हो और हम दु:ख के प्रभाव से प्रभावित न हों। हमें आघातों से बचने की क्षमता प्राप्त हो, जीवन में बहुमुखी प्रतिभा का विकास हो, सफलता मिले तथा जीवन कल्याणमय हो।

यहाँ एक प्रश्न उठ सकता है कि क्या मनुष्य कामनारहित हो जाए। गीता आदमी को कामनारहित होने के लिए नहीं कहती। कर्मयोगी के लिए कामना बन्धन नहीं। बन्धन तो आसक्ति है, अविद्या है। आसक्ति अपने यश के प्रति हो, देह के प्रति हो, त्याग के प्रति हो, भगवद्भक्ति के प्रति हो या स्वयं ब्रह्म के प्रति हो, वह आसक्ति ही है और बन्धन का कारण भी। हथकड़ी चाहे सोने की हो या लोहे की, बाँधने का काम एक-सा ही करेगी। अनासक्त भाव से कर्म करने वाला मनुष्य कर्म करते हुए भी अकर्त्ता रहता है। सुख-दु:ख भोग कर भी अभोक्ता रहता है।

– *'गीता तत्त्व दर्शन' से उद्धृत*

स्वास्थ्य के लिये हठयोग

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

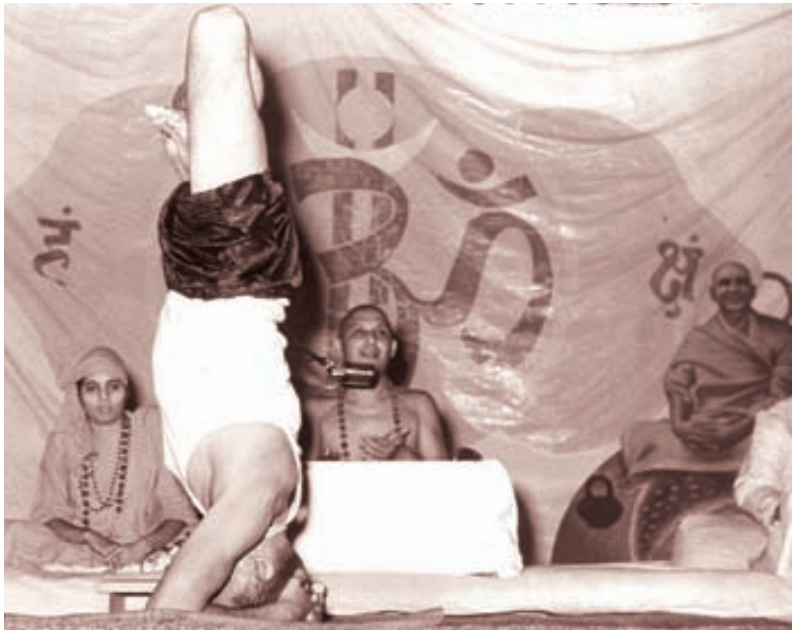

हमारे भौतिक शरीर संस्थान की तुलना एक बड़ी घड़ी के पुर्जों से की जा सकती है। यदि आप किसी कमरे में पन्द्रह बड़ी घड़ियाँ टाँग दें, जिनके दोलकों की गतियाँ भिन्न हो तो कुछ समय बाद आप उन सब दोलकों में समानता पायेंगे। ऐसा होना बिल्कुल स्वाभाविक है, क्योंकि इसमें पारस्परिक लय तथा तरंगों का नियम लागू होता है।

हमारे शरीर के विभिन्न अंग तथा संस्थान अपने अलग-अलग निर्धारित कार्य करते हैं। यह अत्यन्त आवश्यक है कि उनके कार्यों के बीच पूरी तरह समन्वय हो। यदि उनके बीच समन्वय का अभाव है तो उसका सीधा तात्पर्य यह है कि न केवल कोई एक संस्थान बल्कि सबके सब रुग्ण हैं। किसी एक अंग में आई गड़बड़ी के फलस्वरूप समूचे शरीर का स्वास्थ्य डगमगा जाता है। आप ऐसा नहीं कह सकते कि आपके केवल पेट में गड़बड़ी है तथा बाकी शरीर ठीक-ठाक है।

इसलिए जब कोई व्यक्ति हमारे पास अनेक बीमारियाँ लेकर उपचार के लिए पहुँचता है तो सर्वप्रथम हम उसकी एक प्रमुख शिकायत को चुनकर उसका उपचार करते हैं। यह इस सिद्धान्त पर आधारित है कि अनेक में से किसी एक शिकायत को दूर

कर दिया जाये तो धीरे-धीरे पूरा शरीर ठीक हो जाता है। हठयोग द्वारा उपचार पद्धति इसी पर आधारित है। आजकल अनेक योग शिक्षक हठयोग की इस उपचार पद्धति को नहीं अपनाते। अपने चिकित्सा-विज्ञान के ज्ञान के आधार पर वे अलग-अलग शिकायतों के लिए अलग-अलग योगाभ्यासों की लम्बी सूची बनाकर रोगी व्यक्ति को दे देते हैं। वे सोचते हैं कि इस व्यवस्था द्वारा मरीज की शिकायतें एक साथ दूर हो जायेंगी, क्योंकि उनके मतानुसार विभिन्न बीमारियाँ अलग-अलग समूह की होती हैं।

तीन दोष

हमारे भौतिक शरीर की व्यवस्था बड़ी सरल है। जिस प्रकार मशीनें अपशिष्ट कूड़ा-कर्कट बाहर निकालती हैं, उसी प्रकार हमारा भौतिक शरीर भी क्रिया-प्रतिक्रिया के फलस्वरूप उत्पन्न व्यर्थ पदार्थों को निष्कासित करता है। हमारा शरीर निरंतर इन तीन प्रकार के पदार्थों – वात, पित्त तथा कफ को उत्पन्न करता रहता है। यदि समय-समय पर शरीर की साफ-सफाई होती रहे, तो इन तीनों में सन्तुलन स्थापित हो सकता है। इस सन्तुलन द्वारा पूर्ण शारीरिक स्वास्थ्य प्राप्त किया जा सकता है। इस दृष्टि से हठयोग की शोधन-क्रियाओं का बड़ा महत्त्व है। शरीर में संचित इन तीन दोषों का निष्कासन तथा सफाई ही वह सिद्धान्त है जिस पर हठयोग की उपचार-पद्धति आधारित है।

ऊर्जा की दो धाराएँ

शरीर में ऊर्जा का संचय सन्तुलित स्वास्थ्य का दूसरा महत्वपूर्ण पक्ष है जिसे चिकित्सा-विज्ञान में बहुधा अनदेखा कर दिया जाता है। हमें विटामिन्ज़ और कैलोरीज़ के बारे में बहुत कुछ सिखाया जाता है, लेकिन यह नहीं बताया जाता कि हमारा भौतिक शरीर ऊर्जा का भण्डार है तथा ऊर्जा हमारे शरीर के रोम-रोम में गतिशील है। कभी-कभी यह ऊर्जा बुरी तरह विक्षिप्त, अवरोधित अथवा दमित होती है। शारीरिक ऊर्जा शरीर के धनात्मक तथा ऋणात्मक आवेशों से मिलती-जुलती है। इन दोनों के बीच का सही सन्तुलन उत्तम स्वास्थ्य प्रदान करता है।

हमारे शरीर को केवल भोजन तथा विटामिनों से पोषण नहीं मिलता। जीवन में शक्ति का स्रोत धनात्मक तथा ऋणात्मक ऊर्जा है। हठयोग का अर्थ बड़ा ही सरल है। इसके दो अक्षर 'ह' और 'ठ' धनात्मक तथा ऋणात्मक ऊर्जा के द्योतक हैं। 'हं' तांत्रिक बीज मंत्र है जो हमारे शरीर में धनात्मक ऊर्जा का प्रतिनिधित्व करता है। इसी प्रकार 'ठं' बीज मंत्र ऋणात्मक ऊर्जा का प्रतीक है। हठयोग का प्रयोजन हमारे शरीर के भीतर इन दोनों के बीच पूर्ण समन्वय स्थापित करना है।

इस प्रकार हठयोग में तीन महत्त्वपूर्ण धारणाएँ हैं, जिन पर शारीरिक तथा मानसिक चिकित्सा-पद्धति आधारित है –

1. शरीर के किसी एक प्रभावित अंग को दुरुस्त कर शेष शरीर को प्रभावित करना।
2. शरीर से विसर्जित होने वाले तीन प्रकार के मलों की सफाई।
3. शरीर में धनात्मक और ऋणात्मक ऊर्जाओं के बीच सन्तुलन की स्थापना।

षट्कर्म

हठयोग में शरीर की सफाई करने वाली क्रियाओं को षट्कर्म के नाम से जाना जाता है। इन षट्कर्मों में नेति एक सरल किंतु अत्यंत प्रभावशाली विधि है।

नेति– नेति क्रिया में कुनकुना नमकीन पानी नेति लोटे की सहायता से एक नासिका छिद्र में डाला जाता है तथा दूसरे से बाहर निकाल दिया जाता है। नेति क्रिया रबर के कैथेटर द्वारा भी की जाती है। ऐसा तब किया जाता है जब नासिका रन्ध्र में किसी प्रकार की रुकावट होती है। प्राणायाम के पूर्व नेति का अभ्यास लाभकारी होता है क्योंकि दोनों नासिका रन्ध्र साफ होकर खुल जाते हैं। नेति का अभ्यास अनेक बीमारियों में लाभकारी होता है क्योंकि एक बार नासिका रन्ध्रों की अच्छी तरह सफाई हो जाने पर प्राकृतिक आरोग्य लाभ की वैज्ञानिक प्रक्रिया प्रारम्भ होती है। जब हम नासिका से श्वास लेते हैं तो वायु में विद्यमान आयनों के बारे में सन्देश मस्तिष्क में पहुँचता है और फिर नासिका-पटल को आदेश प्राप्त होता है तथा वहाँ धनात्मक तथा ऋणात्मक आयन पृथक् होते हैं। अतएव दोनों नासिका रन्ध्रों की नेति द्वारा पूर्ण सफाई आवश्यक है ताकि मस्तिष्क के सन्देशों का आवागमन और नासिका पटल में आयनों का पृथक्करण भली-भाँति हो सके।

हमने अक्सर देखा है कि जिन लोगों को मिर्गी तथा उन्माद के दौरे पड़ते हैं, वे मुँह से श्वास-प्रश्वास करते हैं। न केवल रात्रि में निद्रावस्था में, बल्कि दिन में भी वे अनजाने में मुँह से श्वास-प्रश्वास करते हैं। इसका कारण यह है कि नासिका-पटल में जो पतली झिल्ली होती है, उसमें सूजन आ जाती है। ऐसे लोग जिनकी नासिका की झिल्ली दीर्घकाल तक सूजी रहती है, मुख से श्वसन करने के लिये बाध्य होते हैं। वे जब मुख से श्वास लेते हैं तो प्राणवायु की सीमित मात्रा फेफड़ों में पहुँचती है। मुख के भीतर वायु में मिलें आयनों को पृथक् करने की मशीनरी नहीं होती। इसका परिणाम यह होता है कि फेफड़े मस्तिष्क तथा हृदय संस्थान पर ज्यादा दबाव डालते हैं। उसका प्रभाव तंत्रिका-तंत्र पर पड़ता है, जिसका परिणाम उन्माद तथा मिर्गी के रूप में प्रकट होता है।

इन उपद्रवों का इलाज बहुत सरल है। मुख-श्वसन का प्रथम कारण है नासिका-पटल में सूजन का होना। सूत्र नेति द्वारा इस सूजन से छुटकारा मिलता है। सूत्र नेति में सूत्र अथवा रबर के कैथेटर का एक छोर नासिका रंध्र के भीतर डाला जाता है। फिर मुख के भीतर हाथ की दो उंगलियाँ डालकर उसे खींचकर बाहर निकालते हैं। इसे आगे-पीछे करने से नासिका में घर्षण होता है। इससे वहाँ आयनों का अच्छी

तरह पृथक्करण हो सकता है। नेति का अभ्यास अर्द्धकपाली, साइनोसाइटिस एवं आँख, नाक, कान तथा गले की शिकायतों में भी बहुत लाभकारी होता है।

धौति – शरीर की आन्तरिक सफाई में धौति का बड़ा महत्त्व है। इसकी तीन तकनीकें हैं – कुंजल या वमनधौति, वस्त्रधौति (जिसमें कपड़े की एक तीन इंच चौड़ी पट्टी गले के अन्दर निगली जाती है) और शंखप्रक्षालन (जिसमें कुनकुना नमकीन पानी पीकर आँतों की सफाई की जाती है)।

कुंजल में हल्का नमकीन पानी पी कर मुख में हाथ की दूसरी तथा तीसरी उंगलियाँ डालकर उल्टी द्वारा जल को बाहर निकाल देते हैं। यह अति अम्लीयता तथा पित्त को बाहर निकाल कर गैस की बीमारी को दूर करने में सहायक होता है। अति अम्लीयता के कारण अनेक बीमारियाँ होती हैं, जिनकी कुंजल रोक-थाम करता है। जिसका पेट खराब रहता है, डकार आती है, मुँह का स्वाद खट्टा रहता है, उसके लिये कुंजल अत्यन्त उपयोगी क्रिया है।

न्यून अम्लता में कुंजन लाभकारी नहीं होता। इस में व्याघ्र क्रिया लाभकारी होती है। न्यून अम्लता से तीव्र अपचन तथा क्षुधानाश की शिकायत होती है। अम्लीयता में कमी के कारण भोजन का पाचन अच्छी तरह से नहीं होता है। इस तरह अपचन की शिकायत होती हो तो हम भोजन के तीन घंटे बाद उसके अवशेष को वमन द्वारा बाहर कर पेट की सफाई करते हैं।

मल का उचित निष्कासन न होने की समस्या से निपटने का सर्वोत्तम साधन शंखप्रक्षालन है। इसमें सोलह गिलास हल्का गर्म पानी पीकर मुख से गुदा मार्ग तक आँतों की सफाई की जाती है। डेढ़ घंटे की इस क्रिया द्वारा आप अपनी आँतों में चिपके सड़े मल, आँव तथा अनपचे भोजन को बाहर निकाल देते हैं। हमारी आँतों की आन्तरिक दीवारों पर कड़ा पदार्थ जमा रहता है, जिसमें भोजन का कुछ अंश बुरी तरह चिपक जाता है। इसको बाहर निकालना आवश्यक है। यह बड़े दुर्भाग्य की बात है कि जब यह आँव के रूप में बाहर निकलता है तो आधुनिक विज्ञान उसे बीमारी घोषित कर औषधि द्वारा रोकने का प्रयास करता है। इस प्रकार हम प्रकृति के कार्य में औषधियों द्वारा बाधा उत्पन्न करते हैं। जब हम शंखप्रक्षालन करते हैं तब छोटी तथा बड़ी, दोनों आँतों से इस मल को पूरी तरह बाहर निकाल देते हैं।

इसके बाहर निकल जाने से आँतें स्वच्छ होकर अपनी पूर्व क्षमतानुसार कार्य करने लगती हैं। जब हमारी आँतें मल से भरी रहती हैं तो उनकी मल आगे ढकेलने की गति धीमी पड़ जाती है, तथा हमारी बड़ी और छोटी आँतों का भीतरी तापमान गिर जाता है। इसका परिणाम यह होता है कि आँतों के भीतर भोजन तथा मल सड़ने लगता है। इससे निकलने वाले विषैले द्रव्यों को शरीर सोख लेता है तथा विषाक्त हो जाता है।

शंखप्रक्षालन के द्वारा शरीर की आन्तरिक सफाई अपने क्षेत्र में विद्यमान मौसम के अनुसार होनी चाहिये। जब गर्मी के बाद ठण्ढ की ऋतु आती है तो समूचे शरीर के भीतर परिवर्तन होता है। जिस प्रकार थर्मामीटर में गर्मी और ठण्ढ के प्रभाव से पारा चढ़ता-गिरता है, उसी प्रकार ऋतु परिवर्तन के साथ शरीर के तापमान में भी उतार-चढ़ाव आता है।

आसन, प्राणायाम तथा ध्यान

हठयोग चिकित्सा पद्धति के साथ आसन तथा प्राणायाम के अभ्यास द्वारा भी बड़े उत्साहवर्धक परिणाम देखने को मिलते हैं। आसन बड़े शक्तिशाली होते हैं, क्योंकि वे हमारी अंत:स्रावी ग्रंथियों को प्रभावित करते हैं। ये ग्रंथियाँ हमारी शरीर-व्यवस्था तथा सन्तुलन बनाए रखती हैं। इनका असन्तुलन बीमारियाँ उत्पन्न करता है।

पाश्चात्य देशों में हृदय-रोग अबाध गति से बढ़ रहा है। शिथिलीकरण के साथ-साथ सिद्धासन का अभ्यास हृदय-रोगियों के लिये बड़ा लाभकारी पाया गया है। सिद्धासन में एक एड़ी से मल-मूत्र द्वार के बीच के भाग को तथा दूसरी एड़ी से जननेन्द्रिय के ऊपरी भाग को दबाते हैं। इस आसन का महत्त्व केवल ध्यान के लिए नहीं है, बल्कि पुरुष हॉर्मोन, जिन्हें टेस्टोस्ट्रॉन कहते हैं तथा जिनका निर्माण अण्डकोशों में होता है, के प्रवाह को भी यह आसन नियंत्रित करता है। यह हॉर्मोन बहुत महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह पुरुष जननांगों के साथ-साथ हृदय संस्थान के कार्यों को नियंत्रित करता है।

ध्यान की प्रक्रिया भी हठयोग का एक अंग है। ध्यान का ईश्वर अथवा धर्म से कोई लेना-देना नहीं है, बल्कि इसका सम्बन्ध हमारे शरीर तथा मस्तिष्क में गतिशील ऊर्जाओं को सन्तुलित कर उन्हें मन तथा शरीर के लिये उपकारी बनाने से है। ये दोनों विरोधी ऊर्जाएँ एक-दूसरे को दबाकर श्रेष्ठ बनने का प्रयत्न करती हैं। ध्यान इन दोनों के बीच समझौता कर एकता स्थापित करता है, जिससे इनका मिला-जुला रूप एक परिपूर्ण ऊर्जा कहलाता है।

योग तथा विज्ञान का समन्वय

आजकल लाखों लोग विभिन्न मानसिक रोगों से ग्रस्त हैं। इसका कारण कुछ और नहीं शरीर के ऊर्जा संस्थान में सन्तुलन तथा सामंजस्य का अभाव है। ऐसे रोगियों की दशा

सुधारने के लिये हमें शरीर को नये दृष्टिकोण से देखना होगा। हमें शरीर की प्रणालियों का पुनर्वर्गीकरण कर रोग-निदान की व्यवस्था को बदलना होगा। जब आधुनिक विज्ञान शरीर की नये ढंग से परिभाषा करेगा, शरीर एवं मन की दशाओं तथा जीवन की परिस्थितियों के बीच अर्थपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करेगा, यौगिक क्रियाओं पर अनुसंधान कर शरीर, मन, भावना और चेतना पर उनके प्रभावों का तुलनात्मक अध्ययन करेगा, तभी संभवत: योग तथा विज्ञान के बीच सुखद एकता स्थापित हो सकेगी।

शारीरिक तथा मानसिक चिकित्सा योग की महत्त्वपूर्ण उपलब्धि मानी जा सकती है। योग अब दमा, मधुमेह तथा रक्तचाप जैसी व्याधियों का सफलतापूर्वक उपचार करने में कामयाब हुआ है। इसके अतिरिक्त मिर्गी, उन्माद तथा गठिया जैसी हठी और जीर्ण बीमारियों के उपचार में हठयोग आशातीत रूप से सफल तथा प्रभावी सिद्ध हुआ है। इसलिए हम इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि हठयोग के द्वारा निश्चित रूप से इन बीमारियों को आमूल दूर किया जा सकता है।

आज की सर्वाधिक आवश्यकता बड़ी संख्या में योग शिक्षकों तथा योगोपचार की है। साथ ही उसके सही तथा गहन प्रशिक्षण की भी आवश्यकता है। यह भी आवश्यक है कि हठयोग का शिक्षक शरीर तथा मन की रचना और उनकी कार्यपद्धति का अच्छा जानकार हो। वह न केवल हठयोग का शिक्षक हो बल्कि हठयोग का वैज्ञानिक भी हो। इस क्षेत्र में व्यापक शोध तथा प्रयोगों की आवश्यकता है। वर्तमान में यूरोप, अमेरिका, भारत तथा दक्षिण पूर्व एशिया के देशों में इसी विषय पर व्यापक शोध कार्य किया जा रहा है कि हठयोग के अभ्यासों का शरीर के विभिन्न अंगों तथा संस्थानों पर क्या प्रभाव पड़ता है। मेरा दृढ़ विश्वास है कि लोग निकट भविष्य में हठयोग के अभ्यासों के महत्त्व और उपयोगिता को समझेंगे।

– ज़िनाल, स्विट्ज़रलैण्ड, सितम्बर 1979

युवा समस्याओं के लिए योग

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

क्या हमारी युवा पीढ़ी एकदम अयोग्य तथा बेकार हो गई है? क्या कानून तथा समाज कल्याण की योजनाओं के अतिरिक्त उसके सुधार का अन्य कोई उपाय शेष नहीं रहा? प्राचीन भारतीय संस्कृति ने एक ऐसी शिक्षा पद्धति की कल्पना तथा विकास किया था जिसमें अनेक शताब्दियों तक रचनात्मक मानसिक प्रशिक्षण की प्रक्रिया स्वयमेव सफलतापूर्वक घटित होती थी। आज एक बार पुन: हमारी प्राचीन शिक्षा-पद्धति पर ध्यान दिया जा रहा है तथा ऐसा माना जाने लगा है कि इसे लागू किया जाए तो भविष्य की पीढ़ियाँ शारीरिक एवं मानसिक रूप से सशक्त तथा आदर्श हो सकती हैं। इस शिक्षा पद्धति का एकमात्र आधार योग ही हो सकता है।

आज की युवा पीढ़ी बेचैन है। वह समस्त सामाजिक बन्धनों को तोड़कर अभिव्यक्ति के नूतन आयामों को खोजना तथा सामाजिक व्यवस्था में सुधार और अन्याय का निराकरण करना चाहती है। इस दृष्टिकोण से देखें तो हमारे नवयुवक इतिहास के अन्य युगों के नवयुवकों से भिन्न नहीं हैं। नवयुवकों ने हर काल में अपने घर, समाज तथा देश की वर्तमान व्यवस्था को बदलने तथा सुधारने का प्रयास किया है। आज की युवा पीढ़ी प्राचीन काल की युवा पीढ़ी से मात्र इस बात में भिन्न है कि वर्तमान युग में अन्तर्राष्ट्रीय संवाद तथा संचार के माध्यम इतने तीव्र और विकसित हो गये हैं कि हमारे नवयुवक अन्य देशों के युवकों के विचारों तथा कार्यकलापों से तुरन्त अवगत हो जाते हैं, और तदनुसार देश, समाज तथा विश्व में व्याप्त शोषण तथा अन्याय का प्रतिकार करने के लिये तैयार हो जाते हैं। युवा पीढ़ी द्वारा परम्पराओं का विरोध, विकास की प्राकृतिक प्रक्रिया का अंश है। इसके बिना मानव का विकास असंभव है। परम्पराओं की अस्वीकृति द्वारा नवयुवक जीवन तथा समाज में अपने लिये स्थान बनाने का प्रयत्न करते हैं ताकि उनका जीवन सुखमय बन सके। जीवन में वह स्थान उनकी व्यक्तिगत प्रकृति तथा रुचि के अनुकूल होगा।

आज एक अजीब बात देखने को मिल रही है। मात्र दस वर्ष पूर्व जो परम्पराएँ एवं विचार सर्वमान्य तथा हितकारी समझे जाते थे, हमारी युवा पीढ़ी उन्हीं का विरोध कर रही है तथा प्राचीन भारतीय यौगिक परम्परा की ओर अभिमुख हो रही है। योगाभ्यास करने वालों की संख्या में निरन्तर वृद्धि हो रही है। सभी आयु समूह के लोग इसमें भाग ले रहे हैं। ऐसा क्यों है? क्या कारण है कि पूरे विश्व की युवा पीढ़ी योग को एक जीवनशैली के रूप में अपना रही है। सयानी पीढ़ी को इस परिवर्तन पर ध्यानपूर्वक विचार करने की आवश्यकता है। इतिहास के हर युग में जो भी क्रांतिकारी परिवर्तन हुए, उनका मूल कारण असंतोष रहा है। यह असंतोष

युवकों की प्रौढ़ावस्था तक बना रहा, जिसकी परिणति वांछित परिवर्तनों के रूप में हुई। इसलिए यह अवश्यम्भावी है कि आज योग में जो रुचि दिखलाई दे रही है, वह भविष्य में पूरे विश्व को प्रभावित करेगी।

प्रौढ़ पीढ़ी की यह आम शिकायत है कि आज के युवक बहुत अधिक स्वतंत्र हो गये हैं तथा अपना अधिकांश समय व्यर्थ की बातों में बिताते हैं। वे ऐसे संगीत में रुचि लेते हैं जो प्रौढ़ पीढ़ी को अरुचिकर लगता है और उनकी वेशभूषा भी बड़ों को अजीब तथा मूर्खतापूर्ण लगती है। वे उन नशीले पदार्थों का प्रयोग धड़ल्ले से करते हैं, जो बड़ों की समझ में त्याज्य तथा हानिकारक होते हैं। परन्तु यह ज्वलन्त सत्य एकदम भुला दिया जाता है कि प्रौढ़ पीढ़ी स्वयं अकल्पनीय मात्रा में मदिरा तथा अन्य मादक द्रव्यों का सेवन करती है। युवा पीढ़ी की यह आलोचना कितनी सही या गलत है, इन बातों को कुछ क्षणों के लिये परे हटा दें तो हमें यह मानना पड़ेगा कि वर्तमान युवा पीढ़ी किसी अन्य काल की अपेक्षा कहीं अधिक सत्यनिष्ठ है। अपने माता-पिता की दृष्टि में नवयुवक जाने-अनजाने में जो भी अच्छा-बुरा कर रहे हैं, वह सत्य को जानने तथा अनुभव करने का ही एक प्रयास है। आज की युवा पीढ़ी ने कई सामाजिक बुराइयों तथा आडम्बरों को समाज से दूर करने का प्रशंसनीय कार्य किया है। अत्याधुनिक तकनीकी विकास, शिक्षा के प्रसार तथा संचार-साधनों ने नवयुवकों को वे सुविधायें प्रदान की हैं जिनसे वे अपना वांछनीय कार्य करने में सक्षम हो सके हैं। आज विभिन्न देशों में नवयुवक जो प्रयोग कर रहे हैं, मानवता तथा व्यक्तित्व के विकास में उनका अप्रतिम योगदान है। वे अपने प्रयोगों से समाज और मानवता को कुछ देने की आकांक्षा रखते हैं। इसलिए यह जरूरी है कि कुछ लोग उनके कार्यकलापों को देखने और समझने का प्रयास करें।

सत्य की खोज के रूप में ही आधुनिक नवयुवकों ने योग का मार्ग पकड़ा है, क्योंकि वे समझते हैं कि योग कभी किसी से यह नहीं कहता कि इसे त्यागो या उसे ग्रहण करो। वह तो मात्र उपयुक्त तकनीक का सुझाव देकर कहता है कि अब स्वयं जाँचो, परखो और उपयुक्त समझो तो स्वीकार करो। योग उन्हें ऐसी जीवनशैली प्रदान करता है जिससे वे राष्ट्रीय सीमाओं का अतिक्रमण कर जाते हैं। यह एक ऐसी बात है जिसे भूत या वर्तमान काल के लोग नहीं समझ सके। यदि मैं भारतीय हूँ तो अन्य देशों की अपेक्षा मुझे भारत को अधिक प्यार करना चाहिये और यदि मैं अंग्रेज हूँ तो इंग्लैंड मेरी निष्ठा तथा देशप्रेम का एकमात्र केन्द्र होना चाहिये – अनेक लोग इस विचारधारा में कुछ भी आपत्तिजनक नहीं देखते, लेकिन आज का नवयुवक इसे निरर्थक समझता है। उसकी दृष्टि में यही संकुचित विचारधारा युगों-युगों से देशों के बीच आपसी कलह तथा गलतफहमी का कारण रही है।

दीर्घकालीन निद्रा के बाद योग ने एकबार पुन: करवट बदलकर आँखें खोली हैं। अब पुन: उसकी माँग तथा लोकप्रियता में दिनोंदिन वृद्धि हो रही है। ऐसा इसलिये

हो रहा है कि वर्तमान युवा पीढ़ी की बुद्धि तथा क्षमता उसकी माँग कर रही है। कल्पना कीजिये, योग भी यदि संकुचित विचारधारा, असहिष्णुता तथा कट्टरता आदि का पोषक होता तो आज की युवा पीढ़ी उसके पास कभी नहीं फटकती; जीवन में अपनाने की बात तो असंभव थी। यदि योग कहता कि एकमात्र यही जीवनपद्धति है जिसे सबको अपनाना चाहिये, तथा अन्य जीवनपद्धतियाँ अपूर्ण, त्रुटिपूर्ण तथा व्यर्थ हैं, तब तो युवा पीढ़ी उसके प्रति कतई आकर्षित नहीं होती।

इतिहास के किसी भी पूर्व काल की अपेक्षा आज स्थिति का संकट कहीं अधिक है। बहुत कम लोग देश, काल, परिस्थिति तथा विश्व में अपनी स्थिति के प्रति आश्वस्त हैं। यहाँ तक कि अपने कार्यालयों एवं घरों में भी वे अपनी स्थिति के प्रति सशंकित हैं। यह बात नवयुवकों तथा बड़े-बूढ़ों पर समान रूप से लागू होती है। जब जीवन में परस्पर अनेक विरोधी विचारधारायें तथा संभावनायें उपस्थित होती हैं तो लोगों की रुचियाँ भी भिन्न होती हैं। वे दिग्भ्रमित हो जाते हैं। भूतकाल में यह स्थिति नहीं थी। हर बेटा अपने पिता का अनुसरण करता था और उसे मालूम था कि वह भविष्य में क्या करेगा। आज के लोगों के सामने यह निर्धारित करना कि भविष्य में उनके जीवनयापन का क्या होगा, एक कठिन समस्या बन गई है। वे अपने माता-पिता से कोई राय इसलिये नहीं लेते कि वे जानते हैं कि माता-पिता भी उनसे कम दिग्भ्रमित नहीं हैं।

नवयुवक सुख और संतोष चाहते हैं, परन्तु बड़े लोग इसकी प्राप्ति का मार्ग बताने में असमर्थ हैं। किसी लेखक ने ठीक ही कहा है – 'आजकल के लोग चुपचाप निराशापूर्ण जीवन बिताते हैं।' ऐसी स्थिति में क्या कोई नवयुवक अपने माता-पिता का अनुसरण करेगा जबकि वह स्पष्ट रूप से जानता है कि उनके तड़क-भड़क वाले जीवन के पीछे दु:ख और निराशा ही विद्यमान हैं। वह जानता है कि उसके माता-पिता के जीवन में सुख के क्षण यदाकदा ही उपस्थित होते हैं, भले ही उनके पास ढेरों धन रहे, वे सिनेमा जाएँ या होटल में बढ़िया भोजन करें।

आनन्द मनुष्य का स्वभाव है। यही कारण है कि आज का नवयुवक अपनी वास्तविक प्रकृति को जानने तथा स्थायी सुख की तलाश में क्षणिक इन्द्रिय सुखों का अतिक्रमण करता है। इसीलिए उन्होंने अपने जीवन में योग को अपनाया है। वे देखते हैं कि योग परिपूर्ण जीवन का साधन है तथा मनुष्य की समस्याओं का समाधान

कर सकता है। आसन-प्राणायाम से शारीरिक तथा मानसिक स्वास्थ्य सुधरता है। स्वस्थ शरीर और मन स्थायी सुख की अनिवार्य आवश्यकताएँ हैं। यह मनोवृत्ति बड़े लोगों की मनोवृत्ति से बहुत भिन्न है। नवयुवक बीमारी की प्रतीक्षा नहीं करते, बल्कि उसकी रोकथाम के लिए प्रयत्न करते हैं। वे जानते हैं कि स्वस्थ शरीर तथा मन स्थायी सुख की सीढ़ी है। बूढ़े लोग लगातार तनावों में रहने के बावजूद सुख और शांति पर तब तक ध्यान नहीं देते जब तक किसी विकट समस्या से ग्रस्त नहीं हो जाते। नवयुवकों ने योगाभ्यास तथा ध्यान को जीवन में अपनाकर मानसिक शांति की प्राप्ति के लिये पहल की है। इस तरह वे अन्य लोगों को दिशा-निर्देश दे रहे हैं।

अब जीवन के आध्यात्मिक पक्ष को लें। हम पाते हैं कि पुरानी पीढ़ी ने बिना समझे-बूझे धर्म तथा कर्मकाण्ड को अपने पूर्वजों से ग्रहण कर लिया है। उन्होंने उसके किसी भी अंश को अस्वीकार नहीं किया है। युवा पीढ़ी इस मामले में भी अपने बड़ों से एक कदम आगे है। उन्होंने व्यावहारिक तथा वैज्ञानिक पद्धतियों द्वारा सब धर्मों में निहित सत्य को अनुभव करने का प्रयास किया है।

एक बार मुझे एक ऐसे नवयुवक से चर्चा करने का अवसर मिला, जो कहता था कि उसे अपने लिये समाज में कोई स्थान दिखलाई नहीं पड़ता। उसके बागी स्वभाव के कारण माता-पिता ने उसे त्याग दिया था। वह अपने मित्रों के साथ अनेक ऊटपटांग चीजें केवल इसलिए करता था कि उसे उन बातों का न करने का कोई कारण नहीं दिखता था। वह नहीं जानता था कि वह क्या खोज रहा है। वह यह सब कुछ इसलिए करता था कि वह अपनी किसी आन्तरिक भावना को व्यक्त करना चाहता था। वह अपने चारों ओर छल, कपट, पाखण्ड आदि देखता था। लोग कई

काम अपनी प्रकृति तथा धर्म के अनुसार नहीं करते थे, बल्कि दूसरों को खुश करने के लिये यंत्रवत् करते थे। वह देखता था कि लोग अपनी भावनाओं का दमन करते हुए अपने आस-पास के लोगों को प्रभावित करने के उद्देश्य से अभिनेता की तरह काम करते थे। लोगों के इस दिखावटी व्यवहार के विरोधस्वरूप ही वह नवयुवक इस प्रकार का अजीबोगरीब व्यवहार करता था।

उसने मुझे अपने बारे में ये सब बातें बताईं। उसने किसी से सुना था कि अपनी वास्तविक प्रकृति को जानने तथा स्थायी सुख प्राप्त करने का एकमात्र साधन योग है। उसने मुझसे पूछा, 'क्या यह सच है?' मैंने उसे बताया कि यह शत-प्रतिशत सच है। मैंने उसे सलाह दी कि यदि वह योग के विषय में और अधिक जानना चाहता है तो किसी योगाश्रम में जाकर अभ्यास करे। मैंने उसे कुछ योगाश्रमों के पते भी दिये।

छ: महीने बाद मुझें उससे दुबारा मिलने का अवसर प्राप्त हुआ। मैंने उससे यह नहीं पूछा कि वह योगाभ्यास करता है या नहीं। मैं उसका चेहरा देखकर ही भाँप गया था। उसने मुझे बताया कि योग ने उसके समूचे जीवन को ही रूपान्तरित कर दिया है। उसने जीवन में स्थायी सुख और शान्ति का मार्ग पा लिया था। वह यह भी जान गया था कि हर वस्तु के पीछे एक सत्य छिपा है, जो पाखण्ड तथा दिखावटीपन से दूर है। अब उसका माता-पिता से मेल हो गया है। वह जीवन के प्रति अपनी गलत वृत्तियों को त्यागने तथा योग को अपनाने के लिये संकल्पित है।

कल्पना कीजिये, यदि दुनियाभर के विद्यालयों और महाविद्यालयों में गणित और विज्ञान की तरह योग का भी व्यापक स्तर पर प्रशिक्षण दिया जाने लगे तो कितना बड़ा परिवर्तन आ सकता है। सर्वत्र बच्चे और नवयुवक स्वस्थ, सुखी तथा विभिन्न परिस्थितियों के अनुकूल होंगे। वे समझदार, कल्पनाशील, शारीरिक और मानसिक रूप से पूर्णतया स्वस्थ तथा अपनी क्षमताओं और उपलब्धियों के प्रति पूर्ण सचेत होंगे। अपनी चेतना के विकसित स्तर के माध्यम से अपने बाह्य जीवन और समाज में अधिक सफलतापूर्वक कार्य कर सकेंगे। योग सेवा का पाठ पढ़ाता है। इस सेवा द्वारा मानवता का बड़ा हित साधन हो सकता है। महाविद्यालयों तथा विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रमों में योग को समाविष्ट कर हम ऐसे स्नातक उत्पन्न कर सकेंगे जो बड़ी बुद्धिमत्ता और ईमानदारी से अपना कार्य कर सकेंगे।

हर बूढ़े तथा नौजवान को अपना समय और शक्ति योगाभ्यास में लगानी चाहिये। विश्व तथा नवयुवकों का भविष्य योग की माँग करता है। योग का अर्थ मिलन होता है। विश्व के सभी मनुष्यों का मिलन योग द्वारा ही संभव हो सकता है। योगाभ्यास द्वारा हमें अपनी संस्कृति तथा जीवनशैली को देखने की वह अन्तर्दृष्टि मिल सकती है, जो आज तक प्राप्त न हो सकी। यह चमत्कार योग द्वारा ही संभव है। योग धर्म नहीं है। वह प्रकृति के नियमों के अनुसार जीने का विज्ञान है, जिसके माध्यम से ही मनुष्य अपने साथियों से प्रेम करेगा, बड़े छोटों को तथा छोटे बड़ों को परस्पर समझ सकेंगे।

संयम, अनुशासन और अभ्यास

स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती

हमारे मनीषियों ने इस संसार में दो मार्ग निश्चित किये हैं। पहला मार्ग, जो संसाराभिमुख है, उसे प्रवृत्ति-मार्ग कहते हैं और दूसरा, जो हमें संसार से विमुख कर ईश्वराभिमुख करता है, उसे निवृत्ति-मार्ग कहते हैं। योग के अनुसार प्रवृत्ति-मार्गी जीवन में संतुलन लाने के लिए संयम और अनुशासन अपनाना जरूरी है। साधना की शुरुआत संयम और अनुशासन से ही होती है। साधना का तात्पर्य केवल आसन करने या ध्यान लगाने से नहीं है। वे तो केवल अभ्यास और विधियाँ हैं जिनके माध्यम से तुम अपने स्वभाव एवं व्यक्तित्व में सकारात्मक परिवर्तन और अपने जीवन में संयम, अनुशासन एवं सुव्यवस्था ला सकते हो। गणित की भाषा में अगर इस सिद्धान्त को कहा जाए तो संयम + अनुशासन + अभ्यास = साधना।

तमोगुण, रजोगुण और सत्त्वगुण

प्रवृत्ति-मार्ग को तमोगुण और रजोगुण ही निर्देशित करते हैं। प्रवृत्ति-मार्ग में लोग राजसिक और तामसिक अवस्थाओं में ही इधर-उधर करवट बदलते रहते हैं। वासनाओं का जन्म होता है, कर्मों का जन्म होता है, विचारों का जन्म होता है, लेकिन ये विचार मनुष्य के क्षणिक सुख से ही जुड़े रहते हैं, अन्तरात्मा की खोज से नहीं। प्रवृत्ति-मार्ग में संयम नहीं, अनुशासन नहीं, व्यवस्था नहीं, शांति नहीं, केवल खोखलापन रहता है।

प्रवृत्ति-मार्ग पर बढ़ते हुए हम किस प्रकार अपने जीवन को सकारात्मक बना सकते हैं, किस प्रकार तामसिक और राजसिक वृत्ति से अपने आपको मुक्त करके अपने जीवन में सात्त्विक वृत्ति को स्थान दे सकते हैं, यह प्रश्न उठता है। हमारे मनीषियों ने इसके बारे में बहुत सुंदर सूत्र दिया है। कहते हैं कि दिन के 24 घण्टों में से 23 घण्टे तुम संसार को दो और एक घण्टा अपने आत्मोत्थान के लिए, अपने आत्म-निरीक्षण के लिए अलग रखो। एक घण्टे के लिए भी अगर हम इस प्रकार का आत्म-निरीक्षण और साधना का कार्य कर सकते हैं, तो प्रवृत्ति-मार्ग पर चलते हुए भी हम एक सात्त्विक विचारधारा, व्यवहार और आचरण को अपना सकते हैं। और वह हमारे प्रवृत्ति-मार्गी जीवन की सबसे बड़ी उपलब्धि रहेगी।

सात्त्विकता वह प्रक्रिया है जो तमस् और रजस् के नकारात्मक परिणामों को रूपान्तरित करने के लिए अपनायी जाती है, और यह तभी सम्भव होता है जब हम अपने जीवन में साधना को अपनाते हैं। साधना में पहली चीज है संयम और अनुशासन का अभ्यास।

संयम के तीन स्तर

हमारे शास्त्रों में कहा गया है कि संयम का तात्पर्य अपने ऊपर अंकुश रखने से है। संयम तीन प्रकार का होता है – वाणी, विचार और इन्द्रिय संयम।

वाणी संयम – वाणी संयम के लिए वाणी में सत्यता और प्रियता लानी चाहिए। लोगों को एक-दूसरे से कड़वे शब्द कहने की आदत है। वाणी में प्रियता लाने के लिए सबसे पहले अपनी बोली से कटुता हटा दो। प्रियता का मतलब यही है कि तुम्हारे शब्दों से सुनने वालों का मन उद्विग्न या परेशान न हो।

यह साधना हर कोई कर सकता है। आजमा कर देख लो, लाभ तुम्हें ही मिलेगा। जीवन की हर परिस्थिति में वाणी संयम का अभ्यास करो। यहाँ आश्रम में हम लोग कुछ घण्टों के लिए मौन का अभ्यास करते हैं। लोग समझते हैं कि मौन का मतलब

चुप रहना, बिल्कुल नहीं बोलना। यह मौन के अभ्यास का प्रारम्भिक तरीका हो सकता है, लेकिन मौन शब्द का यह वास्तविक अर्थ नहीं। मौन शब्द का वास्तविक अर्थ होता है नपी-तुली वाणी। यह अर्थ मौन के मूल शब्द 'माप' से निकलता है। अगर तुम प्रारम्भ में उचित और नपी-तुली वाणी नहीं बोल सकते तो कुछ भी मत बोलो। आखिर अधिकांश समय जो बोलते हो, वह क्या होता है? गपशप, आलोचना, इधर की बात उधर लगाना। दिनभर यही सब तो चलता है। ऐसी वाणी में कोई शक्ति नहीं होती, वह निर्जीव और निरर्थक होती है।

जब तुम किसी पुस्तक का सम्पादन करते हो, तो कुछ शब्दों और वाक्यों को हटा देते हो और कुछ एक जोड़ देते हो। तुम एक वाक्य में तब तक फेर-बदल करते रहते हो जब तक तुम उसके अर्थ से सन्तुष्ट नहीं हो जाते। इसी प्रकार तुम्हें अपनी वाणी का भी सम्पादन करना है। कुछ भी बोलने से पहले उसका उचित सम्पादन कर लो। यही नपी-तुली वाणी है, यही सच्चा मौन है। इस सम्पादन की प्रक्रिया में अपनी वाणी में सत्यता और प्रियता लाओ। ऐसे में तुम हर समय वाणी संयम का अभ्यास कर सकते हो।

वाणी संयम का एक और पक्ष है स्पष्टता। बोलने से पहले दो बार सोच लो कि क्या बोलने जा रहे हो। जो बोल रहे हो उसका अर्थ सही निकल रहा है या नहीं, दूसरा व्यक्ति उसे समझ पा रहा है या नहीं। यह वाणी की स्पष्टता है। एक बार वाणी में स्पष्टता आयेगी तो व्यवहार में भी स्पष्टता आयेगी। जो शब्द तुम्हारे मुँह से निकल रहे हैं, जो अभिव्यक्ति तुम कर रहे हो, वह इस प्रकार की होनी चाहिए कि किसी को उससे गलतफहमी, हानि या दु:ख न हो। इसीलिए हमारी परम्परा में कहा गया – *सत्यं ब्रूयात्, प्रियं ब्रूयात्, न ब्रूयात् सत्यमप्रियम्*।

मानसिक संयम – संयम का दूसरा रूप मानसिक है। मानसिक संयम हासिल करने के लिए तुम्हें अपने मन का अवलोकन करना होगा। मन के अवलोकन का सबसे अच्छा तरीका अपने विचारों या मानसिक गतिविधियों को देखना नहीं, बल्कि अपने सामर्थ्यों, कमजोरियों, महत्त्वाकांक्षाओं और आवश्यकताओं को जानना है।

सामर्थ्य जीवन की सकारात्मक और सात्त्विक शक्तियों के प्रतीक हैं। कमजोरियाँ उन तामसिक बन्धनों और सीमाओं का प्रतिनिधित्व करती हैं जिनसे तुम उबर नहीं पाते। महत्त्वाकांक्षाएँ राजसिक प्रवृत्तियों की प्रतीक हैं और आवश्यकताएँ तीनों का समन्वित, सन्तुलित रूप हैं।

मन को इन सामर्थ्यों, कमजोरियों, महत्त्वाकांक्षाओं और आवश्यकताओं की दृष्टि से देखना है। हर व्यक्ति के जीवन में कुछ क्षमताएँ, कुछ प्रतिभाएँ होती हैं। क्षमता और प्रतिभा को देखकर ही हम किसी व्यक्ति की पहचान बनाते हैं। तुम अच्छे हो या बुरे हो, इसका ज्ञान हमें कैसे होगा? तुम्हारी प्रतिभा और क्षमता ही हमें यह जानकारी दिलाएगी। उसी से हम निर्णय पर पहुँचेंगे कि तुम कैसे व्यक्ति हो। अगर तुम अपने मन की प्रतिभाओं

1993

को विकसित कर पाते हो, तो तुम अपने भीतर सत्त्व के स्तर को बढ़ा रहे हो। तुम ऐसे गुण अर्जित कर रहे हो जो तुम्हें विकास की दिशा में ले जाएँगे।

दूसरी ओर, कमजोरी एक सीमा को दर्शाती है, जिसके आगे हम बढ़ नहीं पाते। एक बार चिंतन करो कि तुम्हारे जीवन में कौन-कौन सी कमजोरियाँ हैं। ये सब कमजोरियाँ मनुष्य के जीवन को विकसित होने से रोकती हैं और एक सीमा के भीतर ही मनुष्य की भावना को घुमाती रहती हैं। इस तरह ये कमजोरियाँ तामसिक प्रकृति की होती हैं।

मन की एक अन्य स्थिति होती है महत्त्वाकांक्षाओं की। हर व्यक्ति अपने जीवन में कुछ महत्त्वाकांक्षाओं को लेकर चलता है। लेकिन बहुत बार हमारी बुद्धि सांसारिक वृत्तों में फँसी होती है और हम निर्णय नहीं ले पाते कि हमारी महत्त्वाकांक्षा हमारे लिए हितकर है या अहितकर, उपयोगी है या अनुपयोगी। बहुत बार हम अपनी महत्त्वाकांक्षा को ही अपने जीवन का लक्ष्य बना लेते हैं। जब हमारी महत्त्वाकांक्षा जीवन का लक्ष्य बनती है, तब हम भौतिक वृत्ति में और फँस जाते हैं। महत्त्वाकांक्षाएँ रजोगुण को अधिक प्रबल बनाती हैं।

इस प्रकार तमोगुण हमारे जीवन में कमजोरी है, रजोगुण महत्त्वाकांक्षा और सत्त्वगुण प्रतिभा, तथा तीनों गुणों की जो साम्यावस्था है, वह है जीवन की आवश्यकता। हमारे जीवन में भोजन, वस्त्र, आदि की जो आवश्यकता है, वह न तो तमोगुण है, न रजोगुण और न ही सत्त्वगुण। वह मात्र एक आवश्यकता है। राजा को भी वस्त्र चाहिए और फकीर को भी। किस प्रकार का वस्त्र, वह बात अलग है। रोटी, कपड़ा और मकान, यह हर व्यक्ति की आवश्यकता है, और आवश्यकता में तीनों गुण साम्यावस्था में रहते हैं।

इन आवश्यकताओं में महती आवश्यकता रजोगुणी हो जाती है। जैसे, कपड़ा हमारी आवश्यकता है, लेकिन अगर बाजार जाकर हम फैशन वाला कपड़ा खरीदते हैं तो वह रजोगुण है। हमें जूता चाहिए। एक सामान्य जूता नहीं, हमें महँगा वाला ही चाहिए। यह रजोगुण है। आवश्यकता अपने आप में साम्यावस्था है, लेकिन उसमें जब महत्त्वाकांक्षा जुड़ जाती है तब वह रजोगुणी हो जाती है।

ये चार अवस्थाएँ मन को विचलित करती हैं, मन की शांत अवस्था में अनेक प्रकार के वृत्तों को जन्म देती हैं जो हमारे जीवन को प्रभावित करते हैं। इसलिए मानसिक संयम का पहला चरण है इन अवस्थाओं को पहचानना और इनके प्रति सजग बनना।

इन्द्रिय संयम– इन्द्रियाँ हमेशा भोग की कामना करती हैं। आँखें किसी मोहक वस्तु को देखती हैं और उसे चाहने लगती हैं। कान कुछ मधुर संगीत सुनते हैं और उसे चाहने लगते हैं। जिह्वा किसी प्रिय वस्तु का स्वाद लेना चाहती है, नाक किसी सुगन्ध का अनुभव प्राप्त करना चाहता है, त्वचा किसी सुखद स्पर्श की कामना

रखती है। इस प्रकार से हर इन्द्रिय में एक कामना छिपी हुई है।

यह कामना इतनी प्रबल है कि आदमी उसके लिए अपनी आहुति देने को तैयार है। मधुमेह का रोगी जानता है कि मीठा नहीं खाना है, पर सोचता है कि इंसुलिन का इंजेक्शन तो ले लिया, अब चावल, आलू, मिठाई, सब कुछ खा सकता हूँ। मतलब अपनी वासना से वह अपने आपको मुक्त नहीं कर सकता है। यहाँ पर इन्द्रिय संयम कहाँ?

किसी निषिद्ध चीज को करने की मन में एक विचित्र कामना उभरती है और तुम उस कामना को मन से निकाल नहीं पाते, क्योंकि तुम्हारे भीतर इन्द्रिय संयम का अभाव है। तुम में मानसिक दृढ़ता और संकल्प शक्ति है ही नहीं। इसलिए तुम्हारी इन्द्रियाँ तुम्हें मनचाही दिशा में खींच कर ले जाती हैं। अगर तुम्हारे पास संकल्प शक्ति और संयम होता तो तुम्हारे सामने मिठाइयों की बीस थालियाँ रख दी जाएँ, पर तुम एक भी मिठाई नहीं उठाओगे, क्योंकि तुम्हें मालूम है कि वह नुकसान करेगी।

इन्द्रियाँ अनेक चीजों की कामना करती हैं और तुम इन्द्रियों के अनुसार ही चलना पसन्द करते हो। लेकिन आध्यात्मिक विकास के लिए जरूरी है कि तुम अपनी विवेक-शक्ति और संकल्प-शक्ति के माध्यम से अपनी इन्द्रियों को नियंत्रित कर सको और उन्हें कह सको, 'अपने सुझावों के लिए धन्यवाद, लेकिन मेरा विचार कुछ और है।'

इन्द्रिय निग्रह के लिए एक विपरीत विचार को अपने मन में लाना आवश्यक हो जाता है, जिसे योग की भाषा में प्रतिपक्ष-भावना कहते हैं। मुझे अमुक चीज देखने में सुख मिलता है, मन में यह पहला विचार आता है। प्रतिपक्ष-भावना को जब हम लाते हैं तब अपने आप से कहते हैं कि दूसरी चीज को भी देखने में सुख मिलता है, केवल इसमें नहीं। मुझे इस भोजन में स्वाद मिलता है, मैं इसकी कामना करता हूँ। प्रतिपक्ष-भावना से दूसरा विचार आता है कि मुझे दूसरे आहार में भी स्वाद मिलता है। विपरीत विचारों को लाकर हम इन्द्रियों को संभालने में सक्षम हो जाते हैं और इस प्रकार जीवन में संयम आता है।

इन्द्रिय संयम, मानसिक संयम और वाणी संयम – एक प्रवृत्ति-मार्गी को अपने जीवन को सकारात्मक बनाने के लिए ये तीन आवश्यक होते हैं। इंद्रिय संयम में परहेज, मानसिक संयम में मन की परिस्थिति को देखते हुए उसका उपचार, और

वाणी संयम में सत्यता एवं प्रियता का आगमन। यह है संयम जिसके बाद आती है अनुशासन की भूमिका।

व्यक्तिगत अनुशासन

संयम का सहायक होता है अनुशासन। अनुशासन का भी हमारे जीवन में अभाव है और अनुशासन के अभाव में जिंदगी केवल मनमर्जी की ही रहती है। जो इच्छा हो सो करो, जिसकी इच्छा न हो मत करो – यह मनमर्जी बतलाती है कि जीवन में अनुशासन का अभाव है, क्योंकि अनुशासन का मतलब होता है जीवन में ऐसी व्यवस्था लाना जिसके द्वारा हमारा शरीर, मन, बुद्धि, भावना और ऊर्जायें स्वस्थ रहें। विशेषकर सोने और खाने-पीने में निश्चित व्यवस्था होनी चाहिए। अगर तुम इन दोनों को व्यवस्थित कर सकते हो तो जीवन के सभी असंतुलन समाप्त हो जाएँगे। तुम कब सोते हो, कब जागते हो, क्या खाते हो, कब खाते हो – इसके लिए समय और नियम निश्चित कर लो। साथ ही शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य में वृद्धि करने वाले योगाभ्यासों को जोड़ने से तुम्हारा जीवन निश्चित रूप से अनुशासित होगा।

अनुशासन लाने के लिए ही मनीषियों ने योग पद्धति का आविष्कार किया। योग के द्वारा शरीर के विकारों को दूर कर शरीर में स्वास्थ्य की प्राप्ति होती है। मन के तनावों को दूर कर मन में शांति की प्राप्ति होती है, भावनाओं की उत्तेजना को शांत कर उनको निर्मल बनाया जाता है, प्राणों की चंचलता को शांत कर प्राणों को एक बिन्दु पर केंद्रित किया जाता है और इस प्रकार जब हमारे शरीर, मन, भावना, प्राण, आदि सब एक विधि के द्वारा नियंत्रित होते हैं तो उनके विकार और रोग अपने आप दूर होते हैं और मनुष्य उत्तम स्वास्थ्य को प्राप्त करता है।

तीन मंत्रों का जप – अगर व्यक्ति जीवन में कुछ अनुशासन प्राप्त करना चाहता है तो उसे एक विधि का अनुसरण करना चाहिए। पहली बात, सबेरे उठने पर चुपचाप पाँच-सात मिनट के लिए आँखों को बंद करके बैठ जाओ। महामृत्युंजय मंत्र, गायत्री मंत्र और दुर्गा जी के बत्तीस नाम – इन तीन मंत्रों का जप प्रात:काल उठते ही हर व्यक्ति को करना चाहिए। मन में संकल्प शक्ति को बढ़ाने के लिए, मन की सृजनात्मक क्षमता की वृद्धि के लिए जरूरी है कि मंत्र का पाठ उस समय हो जब मन अर्द्धचेतन अवस्था में रहता है, पूर्ण चेतन नहीं हुआ रहता। अर्द्धचेतन स्थिति कब आती है? जैसे ही नींद खुलती है तब। मनुष्य का अर्द्धचेतन मन बहुत ही शक्तिशाली तत्त्व है क्योंकि संकल्प-शक्ति का विकास मन के इसी आयाम में होता है। इस अर्द्धचेतन अवस्था में मन न सोया है न जगा है, और इस समय जो भी चिंतन या विचार तुम्हारे भीतर प्रवेश करेगा वह एक संकल्प का रूप लेगा और आपके जीवन में परिवर्तन अवश्य लाएगा।

इसीलिए सुझाव दिया जाता है कि जैसे ही नींद से जागते हो, बिस्तर से अपने पैरों को नीचे करने के पहले ही आँखों को बंद करके शांति से बैठ जाओ और अपने

लिए स्वास्थ्य का संकल्प लेकर ग्यारह बार महामृत्युंजय मंत्र का जप करो। उसके बाद अपने जीवन में प्रतिभा और विवेक का संकल्प लेकर ग्यारह बार गायत्री मंत्र का जप करो। और फिर अपने आप को जीवन की दुर्दशा और दुर्गति से मुक्त रखने के लिए, सुख, शांति और समृद्धि के मार्ग में आगे बढ़ने के लिए, दुर्गा जी के बत्तीस नामों का तीन बार पाठ करना चाहिए। इससे तुम अपने अर्द्धचेतन मन को ऐसा संकल्प देते हो जो तुम्हारी जाग्रत अवस्था में भी और निद्रा की स्थिति में भी मन की दृढ़ता और ऊर्जा को बढ़ाता है।

अपने जीवन और मन में एक सकारात्मक चिंतन को लाने के लिए यह आवश्यक है। नहीं तो होता क्या है कि उठते ही सबसे पहले हाथ जाता है अखबार की ओर या टेलिविजन ऑन करने की ओर ताकि हम समाचार देखें। जो समाचार हम प्रात:काल देखते या पढ़ते हैं वह हमारे इस अर्द्धचेतन मन को प्रभावित करता है और फिर मन में दिनभर चंचलता का वास होने लगता है, नकारात्मक विचारों का आना आरम्भ हो जाता है। दिन में एक समय तो ऐसा होना चाहिए जब मनुष्य अपनी प्रतिभा से सम्बन्ध जोड़े और वह सम्भव हो पाता है प्रात:काल इन तीन मंत्रों के पाठ के दौरान। सबेरे तुम अपने भीतर जिस सकारात्मक चेतना को जगाओगे, वह तुम्हारे दिनभर के क्रियाकलापों को निर्देशित करती रहेगी और तुम्हारे मन को निराशा, चिन्ता या विषाद के अन्धकार में गिरने से बचाएगी। इसलिए व्यक्तिगत अनुशासन के क्रम में पहला अभ्यास मंत्रों का है, जिसके द्वारा हम दिनभर मानसिक सकारात्मकता, संतुलन और सामंजस्य बनाये रख सकते हैं।

आसन-प्राणायाम – उसके पश्चात् शारीरिक स्वास्थ्य आसन और प्राणायाम के द्वारा प्राप्त किया जाता है। और आसन भी गिने-चुने होने चाहिए, ज्यादा नहीं। हर व्यक्ति के लिए पाँच ही आसन अनिवार्य हैं क्योंकि इनसे रोगी का रोग भी दूर होता है और स्वस्थ व्यक्ति के स्वास्थ्य में वृद्धि भी होती है। शरीर के अनुशासन के लिए, प्राणों के प्रवाह को सुचारू रूप से चलाने के लिए जो पाँच मुख्य आसन हैं, वे हैं – ताड़ासन, तिर्यक् ताड़ासन, कटि चक्रासन, सूर्य नमस्कार और सर्वांगासन। इन पाँच आसनों के अतिरिक्त और कुछ करने की आवश्यकता नहीं। अगर इतना कर लोगे तो शरीर में लचीलापन रहेगा, स्फूर्ति रहेगी। शरीर ऊर्जायुक्त और कान्तियुक्त रहेगा।

पाँच आसनों के बाद दो प्राणायाम। पहला प्राणायाम है नाड़ीशोधन प्राणायाम, जिससे हम स्नायुओं एवं मस्तिष्क के तनावों को दूर कर सकते हैं और मस्तिष्क के केन्द्रों में प्राणों का पुनर्संचार कर सकते हैं। दूसरा है भ्रामरी प्राणायाम। ये दो प्राणायाम मस्तिष्क की चंचलता और उत्तेजना को शांत करने में सक्षम हैं। नाड़ीशोधन प्राणायाम से मस्तिष्क के दोनों गोलार्द्ध समस्वरित होते हैं, और भ्रामरी प्राणायाम अंत:स्रावी ग्रंथियों की कार्यप्रणाली को नियंत्रित करता है। जब ग्रंथियाँ सही ढंग से कार्य करती हैं, मस्तिष्क ऑक्सीजन और प्राणशक्ति से आपूरित रहता है और उसके

दोनों गोलार्द्ध सुचारु रूप से कार्य करते हैं, तब मन और मस्तिष्क की कार्यक्षमता कई गुना बढ़ जाती है।

योगनिद्रा – तत्पश्चात् दिन में जब भी थकान का अनुभव हो, मांसपेशियाँ, मस्तिष्क और मन थके हों, तब उस थकान को दूर करने के लिए एक लघु योगनिद्रा का अभ्यास किया जा सकता है। जब थकान दूर होती है तब शरीर में पुनः प्राणों का संचार होता है, शरीर ऊर्जायुक्त होता है।

शयन से पूर्व ध्यान – रात के समय अपने आपको तनावों से मुक्त करने के लिए ध्यान आवश्यक है। अगर तुम सोने से पहले अपने आपको तनावमुक्त कर सकते हो तो कालान्तर में तुम्हारा सम्पूर्ण व्यक्तित्व रूपांतरित हो जाएगा, क्योंकि जीवन में सबसे बड़ी समस्या तनाव की है।

प्रत्येक व्यक्ति तनाव से पीड़ित है लेकिन उससे निपटने में सक्षम नहीं है। तनाव इकट्ठा होता जाता है और तुम उसे निकाल नहीं पाते। इसके लिए सोने से पहले ध्यान का अभ्यास करना चाहिए। इससे तुम्हारा मन शांत और तनावरहित बनेगा, वह तीव्र वृत्तियों से परेशान नहीं होगा। तनाव के समय ही मन वृत्तियों के साथ तादात्म्य का अनुभव करता है। जब तुम पूरी तरह तनाव-रहित होते हो, तब मन दो कदम पीछे हटकर वृत्तियों और इन्द्रिय-विषयों को निष्पक्ष रूप से देख सकता है। इसलिए रात्रि में सोने के पूर्व ध्यान का अभ्यास करना चाहिए। आधा या एक घण्टा नहीं, पाँच मिनट पर्याप्त हैं। सबसे पहले अपने आपको संसार से अलग कर लो। 'मैं संसार के प्रभावों से मुक्त हूँ' – इस प्रकार का विचार लाकर चिंतन करो कि 'मैं मन नहीं हूँ, न मन से जुड़ा हुआ सुख-दुःख का अनुभव हूँ; मैं शरीर नहीं हूँ, न शरीर से जुड़ा हुआ सुख-दुःख का अनुभव हूँ; मैं चैतन्य आत्मा हूँ।' और चैतन्य आत्मा का विचार लाकर पाँच मिनट ध्यान करो। चाहे वह मंत्र का जप हो या ध्यान का कोई

अन्य अभ्यास। और उसके बाद सो जाओ। मंत्र, आसन-प्राणायाम, योगनिद्रा और ध्यान – यह है यौगिक अनुशासन। अगला अनुशासन लाना है आहार में।

आहार-संयम – यह निश्चित कर लो कि मैं इतने बजे अपना भोजन करूँगा, इसके आगे-पीछे कुछ नहीं। यह जो आदत हम लोगों को लग गई है कि जब चाहो कुछ-न-कुछ मुँह में डालते रहो, इससे अपने आपको मुक्त करने का प्रयास करो, क्योंकि यह शरीर के लिए हानिकारक है। हम लोगों के पाचन तंत्र में भोजन पचाने के रसायन हमेशा एक निश्चित मात्रा में निकलते हैं। अगर तुम दस बार खाते हो, चाहे वह मूँगफली का दाना ही क्यों न हो, उतनी ही बार वे रसायन पेट में निकलते हैं। जब पेट में इन रसायनों की मात्रा बहुत हो जाती है, तब फिर उस समय हम पित्त का शिकार होते हैं, क्योंकि रसायनों की गुणवत्ता पित्त की है।

आयुर्वेद में कहा गया है कि शरीर में तीन प्रकार के दोष होते हैं – वायु, कफ और पित्त। जब ये तीन दोष प्रबल हो जाते हैं तब आदमी रोगी होता है। हम लोग यह जो बार-बार भोजन करते हैं या कुछ-न-कुछ अपने मुँह में डालते रहते हैं, उससे पित्त की शिकायत बढ़ती है। टायलेट के फ्लश को तुम दिन में तीन-चार बार ही खींचोगे तो लम्बे समय तक काम करेगा। लेकिन अगर उसी फ्लश को तुम प्रतिदिन चालीस बार खींचोगे तो कुछ ही सप्ताह में वह बेकाम हो जाएगा। उसी प्रकार पेट में बार-बार कुछ डालते रहने से वह भी बेकाम हो जाता है। इसलिए, आयुर्वेद और योग में कहा गया है कि आहार-संयम मनुष्य के स्वास्थ्य को कायम रखने के लिए आवश्यक है। भोजन के लिए समय निश्चित कर लो। यह कोई जरूरी नहीं कि दिन में दो बार ही खाना है, लेकिन भोजन का समय निश्चित रहे।

निद्रा में नियमितता – अनुशासन में तीसरी चीज़ है निद्रा। सोने का समय भी निश्चित और सवेरे उठने का समय भी निश्चित। हाँ, कुछ दिन अपवाद हो सकते हैं। बाह्य व्यस्तता या अन्य परिस्थितियों के कारण हो सकता है कि इस क्रम में कुछ दिन विघ्न हो। उसको दोष नहीं, अपवाद मानो। लेकिन जहाँ तक सम्भव हो सके, सोने और उठने का समय निश्चित कर लो। बहुत ज्यादा सोना और बहुत कम सोना, दोनों तुम्हारे मन-मस्तिष्क के लिए ठीक नहीं। सोने और जागने में नियमितता लाने से तुम्हारे मन-मस्तिष्क चुस्त-दुरुस्त रहेंगे।

योगाभ्यास, आहार-अनुशासन और निद्रा-अनुशासन – इन तीनों को अगर हम अपनी जीवनशैली में अपना लें तो हमारा जीवन अनुशासित हो जाएगा। संयम तथा अनुशासन, दोनों के मेल को ही साधना कहते हैं। यह तरीका है प्रवृत्ति-मार्गियों के लिए ताकि वे अपने जीवन में थोड़ी व्यवस्था, थोड़ा अनुशासन ला सकें, एक स्वस्थ एवं शांत जीवन व्यतीत कर सकें, और उसके साथ-ही-साथ, अपनी क्षमताओं और प्रतिभाओं का उपयोग अपने तथा दूसरों के हित में करते रहें।

– *'प्रवृत्ति एवं निवृत्ति' से उद्धृत*

बहिरंग और अंतरंग योग

स्वामी सत्यसंगानन्द सरस्वती

यह आश्चर्य की बात नहीं कि आज योग ने एक परिपूर्ण एवं सम्पूर्ण विद्या का श्रेय हासिल किया है और समाज के प्रत्येक वर्ग में योग को मान्यता मिली है, चाहे वह फैशन, उद्योग, खेल जगत्, चिकित्सा क्षेत्र, शिक्षा, सेना, पुलिस या आम आदमी का जीवन हो। इतना ही नहीं, सियाचिन की बर्फीली चट्टानों से लेकर थार के रेगिस्तान की कठिन परिस्थितियों को झेलने में योग एक अहम् भूमिका निभा रहा है। बच्चे-बूढ़े-नौजवान, स्त्री-पुरुष, ऊँच-नीच, अमीर-कंगाल, देश-वर्ण-जाति, धर्म-राष्ट्रीयता इत्यादि जैसे हर भेद-भाव को पीछे छोड़कर सभी ने आज योग को तहेदिल से स्वीकार किया है। दुनियाभर में योग की माँग है और अब कोई संदेह नहीं कि योग समाज का अभिन्न अंग बन चुका है।

आखिर योग की इस लोकप्रियता का रहस्य क्या है? योग को इतनी व्यापक मान्यता क्यों मिली? सच पूछें तो इसका जवाब बहुत ही सरल है, जो एक ही वाक्य में बतलाया जा सकता है। और वह है कि योग में मानव समाज की हर समस्या को हल करने की क्षमता है। मानव व्यक्तित्व के अलग-अलग स्तर हैं, जिस कारण उसकी आवश्यकतायें भी नानाविध हैं। वह हमेशा कार्यवश रहता है, जिस कारण उसे कुछ-न-कुछ करने की इच्छा सताती रहती है। अगर उसे कुछ करने को न मिले तो वह उदास हो जाता है। इसके अलावा मनुष्य बुद्धिजीवी है जिस कारण वह हमेशा अपने चारों ओर एक तर्क की दुनिया बुनते रहता है। कोई बात उसे तर्कहीन लगे तो वह उसे कभी नहीं स्वीकारता, भले ही वे तथ्य कितने ही सच क्यों न हों। अपनी दुनिया को वह इस तर्क के आइने के जरिए ही देखता है और अपना जीवन उसी आकार में ढालने का प्रयास करता है।

इसके ठीक विपरीत वह अत्यन्त भावुक भी है। हर समय उसके व्यवहार पर भावनाओं का गहरा असर रहता है और ये भावनाएँ इतनी तीव्र हैं कि यदि उन्हें

सही दिशा न दी जाए या उनका सही उपयोग न किया जाये तो वे घातक सिद्ध हो सकती हैं। भावनाओं के अतिरेक से नर्वस ब्रेकडाउन, आत्महत्या, दिल का दौरा और अनेक घातक परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है। इसके अलावा मनुष्य का एक पारलौकिक व्यक्तित्व भी है, जिसका परिचय उसे स्वप्न, कल्पनाओं और सूक्ष्म विचारों के रूप में होता है। और फिर मूल रूप में उसका स्वभाव आध्यात्मिक है जिसकी झलक उसकी श्रद्धा और विश्वास में साफ दिखाई देती है। एक नास्तिक भी भले ही भगवान पर विश्वास न करे, अपने आप पर और अपने अस्तित्व पर विश्वास तो करता ही है।

योग की सफलता का मुख्य कारण यह है कि वह इन सब आवश्यकताओं पर ध्यान देता है। योग की शुरुआत भले ही शरीर से हो, किन्तु उसका असर व्यक्ति को चेतना के उच्चतम स्तर तक पहुँचा सकता है। कर्म योग उसकी कार्यक्षमता को प्रभावित करता है, वैसे ही भक्ति योग उसकी भावनात्मक आवश्यकताओं को पूरा करता है। राज योग उसकी पारलौकिक संभावनाओं का पोषण करता है और ज्ञान योग उसकी बौद्धिक पिपासा को तृप्त करता है। योग का यह समन्वय हमारी आध्यात्मिक खोज के लिए पर्याप्त है, क्योंकि इन विभिन्न योगों के द्वारा हमें जीवन सम्बन्धित हर एक क्लिष्ट प्रश्न का सरल उत्तर आसानी से मिल सकता है।

अनादि काल से हमारे पूर्वजों को स्पष्ट मालूम था कि अगर अपने आप को सुधारना है तो यह केवल चेतना के विस्तार से ही सम्भव है। स्थूल चेतना का दिव्य अनुभूतियों की ओर विस्तार होने पर ही मनुष्य पशु योनि से विरासत में मिली आहार, निद्रा, भय, मैथुन जैसी स्वाभाविक प्रवृत्तियों पर नियंत्रण पा सकता है। परन्तु आज की आधुनिक दुनिया में चेतना के विकास पर कोई ध्यान नहीं देता। ज्यादा-से-ज्यादा बुद्धि के विकास का प्रयत्न होता है, क्योंकि आज की दुनिया में स्वाभाविक प्रवृत्ति के साथ-साथ बुद्धि की भी जरूरत पड़ती है। इसलिए जीवन में सफलता के लिए हम केवल बुद्धि पर ध्यान देते हैं। पर सवाल उठता है कि क्या हमारे जीवन का प्रयोजन केवल जीना है? आम आदमी की सोच आज इतनी संकुचित और सीमित हो गयी है कि जीने के अलावा उसे और कुछ सूझता ही नहीं।

हमारे लिए यह समझ लेना अत्यन्त आवश्यक है कि केवल बुद्धि के विस्तार से हमारी समस्याओं का समाधान सम्भव नहीं है। आखिरकार क्या तुम केवल शरीर, मन, भावना और बुद्धि हो या तुम्हारा अस्तित्व उससे परे भी कुछ है। शरीर और शारीरिक स्तर की चीजों से हम इतने आसक्त हैं कि हमारा योगाभ्यास भी केवल शरीर और मन तक ही सीमित रह गया है। लेकिन योग की पहुँच इससे भी परे है और दुनिया में आध्यात्मिक मानसिकता के अनेक लोग हैं जिनमें शरीर और मन के परे क्या है यह जानने की रुचि है। क्या यह शरीर ही अंतिम सत्य है या इससे सूक्ष्म भी कुछ है – ऐसी जिज्ञासा उनमें प्रबल है।

शरीर और मन से परे हमारे अस्तित्व के अलावा एक और प्रश्न उठता है। क्या हमारे अतिरिक्त इस ब्रह्माण्ड में अन्य कोई अस्तित्व है जिसका स्वरूप दिव्य है? सीधे शब्दों में कहा जाय तो मन में देवी-देवताओं की सच्चाई का प्रश्न उठता है। भारतवर्ष में इन सवालों पर सदियों से विश्लेषण होते आया है और हमारे ऋषि-मुनियों ने इन सवालों पर सहस्राब्दियों तक खुलेआम चर्चा की और अंत में वे एक ही निष्कर्ष पर पहुँचे – 'Know Thy Self', अपने आप को जानो – कोऽहं।

उनके इस वक्तव्य का आधार है कि यदि तुम अपने आप को जान लोगे तो उसी क्षण ब्रह्माण्ड में सब चीजों का ज्ञान प्राप्त हो जाएगा। आज वैज्ञानिक भी ऐसी ही बातें कर रहे हैं। वे कहते हैं कि मनुष्य, ब्रह्माण्ड की प्रतिमूर्ति है, याने कि हर मनुष्य के भीतर एक छोटा ब्रह्माण्ड छिपा है। जो कुछ बाहर दिखाई देता है – सूर्य-चन्द्रमा, ग्रह-तारे, पर्वत-नदियाँ, ये सब भीतर में लघु रूप में विद्यमान हैं। फर्क इतना है कि वे इसे अद्वैत वेदान्त के बदले वैज्ञानिक परिभाषा में 'यूनिफाइड फील्ड थ्योरी' कहते हैं।

इस वैज्ञानिक सिद्धान्त की मान्यता है कि इस ब्रह्माण्ड में सृष्टि का हर पदार्थ किसी व्यापक, अदृश्य माध्यम के द्वारा एक-दूसरे से जुड़ा है। विख्यात वैज्ञानिक आइन्सटाइन ने कहा है, 'आँखों से दिखने वाली यह पृथकता केवल भ्रम है, असलियत में इस ब्रह्माण्ड में स्थित हम सब एक ही हैं। बस हमें अपनी संवेदना की सीमाओं को इतना बढ़ाना होगा कि हम सारे विश्व को अपने दायरे में समा लें।' इस सृष्टि में सभी जीव-जंतु एक अदृश्य शक्ति से आपस में जुड़े हैं। उस अदृश्य शक्ति का दूसरा नाम परमात्मा ही है।

लगता है कि आज हमारे समाज में एक बीमारी आ गयी है। हमारी सोच और समझ, हमारे वैचारिक प्रश्न केवल बाहर तक ही सीमित रहते हैं। बातें तो हम अध्यात्म की करते हैं जरूर, पर अटके हैं पदार्थवाद और विषयों की वृत्ति में। अध्यात्म में हमारी रुचि केवल एक दिमागी खुराफात है। और इससे यदि हमें कोई जवाब मिल भी जाए तो हम उस पर और प्रश्न करने लगते हैं, क्योंकि बुद्धि और मन का तो स्वभाव ही शक और प्रश्न तक सीमित है। सच तो यह है कि हमें मन और बुद्धि द्वारा आध्यात्मिक प्रश्न का उत्तर कभी नहीं मिल सकता और पदार्थवाद और इन्द्रियों के वश में रहकर हमें सच्चा आनन्द मिलना असम्भव है। हाँ, यदि तुम्हें पदार्थवादी जिन्दगी जीने में रुचि हो तो पूरा हक है, लेकिन तुम्हारे चुने रास्ते से हटकर चलने वालों पर ऊँगली उठाने का तुम्हें कोई हक नहीं बनता। यदि कोई मन और पदार्थ के परे बसी चेतना का अनुभव करना चाहे और उसके अनुकूल जीवन-पद्धति चुने तो उसे वैसे जीने का उतना ही हक है जितना तुम्हें अपनी जीवन-पद्धति जीने का।

इन दो तरह के लोगों के लिए दो भिन्न प्रकार के योग मार्ग हैं – बहिरंग और अंतरंग। जो योग आज दुनियाभर में हजारों-लाखों की संख्या में लोगों को शरीर और मन की तंदुरुस्ती के लिए सिखलाया जा रहा है वह बहिरंग योग है। परन्तु

आंतरिक चेतना के विस्तार के लिए एक और योग है, जिसे अंतरंग योग कहते हैं। बहिरंग योग लाभदायक अवश्य है, पर यदि तुम अपने में मूलभूत रूपांतरण चाहते हो तब तुम्हें अंतरंग योग को अपनाना पड़ेगा। हाँ, सच है कि बहिरंग और अंतरंग योग एक-दूसरे से अलग नहीं, क्योंकि बहिरंग योग अन्त में व्यक्ति को उस बिन्दु तक ले जाता है जहाँ वह गहराई में छिपे सूक्ष्म तत्त्व का अनुभव करने लगता है और उसका झुकाव अंतरंग जीवन की तरफ जाता है।

अंतरंग जीवन का मतलब है चेतना की गहराई तक पहुँचना। यदि तुम अपनी चेतना को संभाल सको तो तुम जीवन के हर पहलू को संभाल सकोगे, क्योंकि चेतना ही तुम्हारी परिपूर्णता है। फिर तुम्हें न तो योगा थेरॉपी और न ही फिटनेस योगा की आवश्यकता होगी, क्योंकि तुम्हारी सब समस्याएँ चेतना के विकास के द्वारा संभल जाएँगी। चेतना ही वह स्रोत है, वह जड़ है जहाँ से शरीर, मन, भावना और बुद्धि उत्पन्न हुए हैं। जब जड़ तक जाने में तुम सफल होगे, तब उसकी शाखाएँ अपने आप सुधर जाएँगी। चेतना की गहराइयों को खोज निकालना ही आंतरिक जीवन का तात्पर्य है, क्योंकि अगर तुम अपनी चेतना को व्यवस्थित कर सको, तो तुम्हारा समस्त व्यक्तित्व अपने आप ही व्यवस्थित हो जायेगा।

– *'योग सत्संग' से उद्धृत*

राजनाँदगाँव के शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र की हाईस्कूल छात्राओं की संवेगात्मक परिपक्वता एवं आत्म-विश्वास के तुलनात्मक अध्ययन पर योग का प्रभाव

अवंतिका शर्मा (अकल्मषा), व्याख्याता, राजनाँदगाँव
ए.के. नायक, शोधकर्त्ता, आर.टी.एम. यूनिवर्सिटी, नागपुर

प्रस्तावना

प्राचीन युग में शिक्षा एवं योग को न तो पुस्तकीय ज्ञान का पर्यायवाची माना गया और न ही जीविकोपार्जन का साधन। इसके विपरीत शिक्षा एवं योग को वह प्रकाश माना गया, जो व्यक्ति को अपना बहुआयामी विकास करने, उत्तम जीवन व्यतीत करने और मोक्ष प्राप्त करने में सहायता देता था।

आज योग समाज का अभिन्न अंग बन चुका है। श्री स्वामी सत्यानन्द जी का यह कथन अब पूर्णतया साकार होता प्रतीत होता है – 'योग अतीत के गर्भ में प्रसुप्त कोई कपोल-कथा नहीं है। यह वर्तमान की सर्वाधिक मूल्यवान् विरासत है। यह वर्तमान युग की अनिवार्य आवश्यकता और आने वाले युग की संस्कृति है।'

योग शब्द संस्कृत धातु 'युज्' से बना है जिसका अर्थ होता है 'जोड़ना'। इस जोड़ने को आध्यात्मिक शब्दावली में व्यष्टि चेतना का समष्टि चेतना से मिलन कहा जाता है। व्यावहारिक स्तर पर योग शरीर, मन और भावनाओं में संतुलन और सामंजस्य स्थापित करने का एक साधन है, जिससे व्यक्ति की संवेगात्मक परिपक्वता में सुधार आता है। संवेगात्मक परिपक्वता का तात्पर्य संवेगों की उस स्थिति से है, जिसमें संवेगों पर नियंत्रण और परिवेश के अनुसार उनकी उचित ढंग से अभिव्यक्ति दिखलाई पड़ती है।

हार्न के अनुसार – 'शिक्षा शारीरिक और मानसिक रूप से विकसित सचेत मानव का अपने मानसिक, संवेगात्मक और संकल्पित वातावरण से उत्तम सामंजस्य स्थापित करना है।' यह सामंजस्य स्थापित करने का सर्वश्रेष्ठ माध्यम योगाभ्यास है। व्यक्ति की संवेगात्मक स्थिति को संतुलित अवस्था में रखने के लिए योगाभ्यास की आवश्यकता होती है, ठीक वैसे ही आत्मविश्वास बढ़ाने के लिए भी योगाभ्यास आवश्यक है।

आज हम इक्कीसवीं सदी में प्रवेश कर गये हैं, जहाँ योग हमारी संवेगात्मक परिपक्वता, आत्मविश्वास एवं आध्यात्मिक सुख को उच्चतम शिखर पर चढ़ा सकता है। विद्यार्थी अपने दैनिक जीवन में शारीरिक स्वस्थता एवं आत्मविश्वास बढ़ाने तथा संवेगों को परिपक्व करने हेतु ताड़ासन, तिर्यक् ताड़ासन, कटि चक्रासन, सूर्य नमस्कार, सर्वांगासन, ध्यान, प्राणायाम आदि यौगिक क्रियाएँ अपने जीवन में शामिल कर सकते हैं।

आत्मविश्वास जीवन में सफलता पाने की पहली सीढ़ी है, जो जीवन में आने वाली हर कठिनाइयों को दूर करता है। इसलिए हम प्रत्येक विद्यार्थी के आत्मविश्वास को जगायें, उसे पहचानें, क्योंकि आत्मविश्वास एक आभा है और जीने का सच्चा आनन्द है। यही विश्वास उनके जीवन का सर्वांगीण विकास करता है। आत्मविश्वासी विद्यार्थियों में सृजनात्मकता, जिज्ञासा, महत्त्वाकांक्षा, तार्किक शक्ति, कार्यकुशलता, विवेक इत्यादि गुण आसानी से विकसित हो सकते हैं।

शोध अध्ययन के प्रमुख उद्देश्य

शोधकर्ता ने अध्ययन के कुछ उद्देश्य निर्धारित किये, जो इस प्रकार थे –

1. ग्रामीण क्षेत्र में अध्ययनरत योगाभ्यास करने वाली छात्राओं की संवेगात्मक परिपक्वता ज्ञात करना।
2. शहरी क्षेत्र में अध्ययनरत योगाभ्यास नहीं करने वाली छात्राओं की संवेगात्मक परिपक्वता ज्ञात करना।
3. ग्रामीण क्षेत्र में अध्ययनरत योगाभ्यास करने वाली छात्राओं एवं शहरी क्षेत्र में अध्ययनरत योगाभ्यास नहीं करने वाली छात्राओं की संवेगात्मक परिपक्वता का तुलनात्मक अध्ययन करना।
4. ग्रामीण क्षेत्र में अध्ययनरत योगाभ्यास करने वाली छात्राओं के आत्मविश्वास का स्तर ज्ञात करना।
5. शहरी क्षेत्र में अध्ययनरत योगाभ्यास नहीं करने वाली छात्राओं के आत्मविश्वास का स्तर ज्ञात करना।
6. ग्रामीण क्षेत्र में अध्ययनरत योगाभ्यास करने वाली छात्राओं एवं शहरी क्षेत्र में अध्ययनरत योगाभ्यास नहीं करने वाली छात्राओं के आत्मविश्वास के स्तर का तुलनात्मक अध्ययन करना।
7. शहरी क्षेत्र में अध्ययनरत योगाभ्यास नहीं करने वाली छात्राओं की संवेगात्मक परिपक्वता एवं आत्मविश्वास स्तर के सम्बन्ध की जानकारी प्राप्त करना।
8. ग्रामीण क्षेत्र में अध्ययनरत योगाभ्यास करने वाली छात्राओं की संवेगात्मक परिपक्वता एवं आत्मविश्वास स्तर के सम्बन्ध की जानकारी प्राप्त करना।

शोध अध्ययन की परिकल्पनायें

1. ग्रामीण क्षेत्र में अध्ययनरत योगाभ्यास करने वाली छात्राओं तथा शहरी क्षेत्र में अध्ययनरत योगाभ्यास नहीं करने वाली छात्राओं की संवेगात्मक परिपक्वता में सार्थक अन्तर पाया जायेगा।
2. ग्रामीण क्षेत्र में योगाभ्यास करने वाली छात्राओं तथा शहरी क्षेत्र में योगाभ्यास नहीं करने वाली छात्राओं के आत्मविश्वास में सार्थक अन्तर पाया जायेगा।

3. हाईस्कूल स्तर पर अध्ययनरत शहरी क्षेत्र की योगाभ्यास नहीं करने वाली छात्राओं की संवेगात्मक परिपक्वता का आत्मविश्वास पर धनात्मक प्रभाव पाया जायेगा।
4. हाईस्कूल स्तर पर अध्ययनरत शहरी क्षेत्र की योगाभ्यास नहीं करने वाली छात्राओं की संवेगात्मक परिपक्वता के आत्मविश्वास पर पड़ने वाले प्रभाव एवं ग्रामीण क्षेत्र की योगाभ्यास करने वाली छात्राओं की संवेगात्मक परिपक्वता के आत्मविश्वास पर पड़ने वाले प्रभाव में अन्तर पाया जायेगा।

शोध अध्ययन का सैम्पल

प्रस्तुत लघु शोध कार्य में आँकड़ों के एकत्रीकरण के लिए राजनाँदगाँव जिले से गाँव की 100 एवं शहर की 100 छात्राओं का चयन किया गया है। शहर की पाँच और गाँवों की पाँच शालाओं को लिया गया, जिनमें प्रत्येक शाला से 20 छात्राओं को लिया गया। प्रत्येक शाला की नवमी एवं दसवीं कक्षा में अध्ययनरत छात्राओं को लिया गया, जिसमें नवमी कक्षा की छात्राओं की संख्या 10 तथा दसवीं कक्षा की छाश्राओं की संख्या भी 10 ली गई।

शोध अध्ययन में प्रयुक्त उपकरण

प्रस्तुत शोध प्रबंध में आँकड़ों को एकत्रित करने के लिए जो उपकरण प्रयोग में लाये गये, वे निम्न हैं –

1. संवेगात्मक परिपक्वता मापनी – डॉ. यशवीर सिंह, डॉ. महेश भार्गव
2. आत्मविश्वास मापनी – डी.डी. पाण्डेय द्वारा निर्मित

परिकल्पना क्रमांक – 1

ग्रामीण क्षेत्र में अध्ययनरत योगाभ्यास करने वाली छात्राओं तथा शहरी क्षेत्र में अध्ययनरत योगाभ्यास नहीं करने वाली छात्राओं की संवेगात्मक परिपक्वता में सार्थक अन्तर पाया जायेगा।

सारणी क्रमांक – 1

तुलनात्मक प्रतिदर्शों की संवेगात्मक परिपक्वता के परिणामों की व्याख्या –

क्र. सं.	ग्रामीण/शहरी छात्राएँ	मध्यमान	प्रमाणित विचलन	प्रमाणित त्रुटि	क्रांतिक अनुपात
1	ग्रामीण छात्राएँ	110.1	29.47	3.002	8.69
2	शहरी छात्राएँ	84	15.84		

हाईस्कूल स्तर पर अध्ययनरत ग्रामीण एवं शहरी छात्राओं की संवेगात्मक परिपक्वता क्रमश: 110.1 और 84 तथा प्रमाणित विचलन क्रमश: 29.47 और 15.84 पाया गया। मध्यमानों के अन्तर की सार्थकता की जाँच हेतु क्रांतिक अनुपात ज्ञात करने पर 8.69 पाया गया है।

198 df पर 0.05 विश्वास स्तर पर t मूल्य 1.97 है जो कि गणना द्वारा प्राप्त किये गये मान्य से कम है, इसलिए सार्थक अन्तर पाया गया है।

कारण

1. ग्रामीण क्षेत्र में छात्राओं पर योगाभ्यास का गहरा प्रभाव पड़ा है। गाँवों में संयुक्त परिवार पाया जाता है, जिससे उनमें सामंजस्य क्षमता पाई गई है। अपने दैनिक जीवन में यौगिक क्रियाएँ अपनाने के कारण संवेगात्मक-परिपक्वता एवं स्वास्थ्य में आगे पायी गई हैं। इसके विपरीत शहरों में छोटा परिवार पाया जाता है जिससे उनमें सामंजस्य क्षमता का अभाव पाया गया एवं अपने दैनिक जीवन में यौगिक क्रियाएँ नहीं अपनाये जाने के कारण संवेगात्मक परिपक्वता एवं स्वास्थ्य में कमी पायी गई है।
2. गाँवों में आधुनिकता का अभाव पाया गया, जबकि शहरों में आधुनिक सुख-सुविधायें पूर्ण रूप से पाई गईं। अत: शहर की छात्राओं में संघर्षपूर्ण वातावरण पाया गया, और उनमें अधिक सुख-सुविधाओं की लालसा के कारण मानसिक तनाव, संघर्ष, मानसिक असंतुलन अधिक पाया गया। जबकि गाँवों में उनकी आवश्यकतानुसार आर्थिक, सामाजिक एवं पारिवारिक रूप से सम्पन्नता पाई गयी है। अत: गाँवों में संवेगात्मक परिपक्वता अधिक पाई गई है।

परिकल्पना क्रमांक – 2

ग्रामीण क्षेत्र में अध्ययनरत योगाभ्यास करने वाली छात्राएँ तथा शहरी क्षेत्र में अध्ययनरत योगाभ्यास नहीं करने वाली छात्राओं के आत्मविश्वास में सार्थक अन्तर पाया जायेगा।

सारणी क्रमांक – 2

तुलनात्मक प्रतिदर्शों के आत्मविश्वास के परिणामों की व्याख्या –

क्र. सं.	ग्रामीण/शहरी छात्राएँ	मध्यमान	प्रमाणित विचलन	प्रमाणित त्रुटि	क्रांतिक अनुपात
1	ग्रामीण छात्राएँ	11.3	5.45	0.8	1.25
2	शहरी छात्राएँ	12.3	5.95		

शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र के हाईस्कूल स्तर पर अध्ययनरत छात्राओं के आत्मविश्वास का मध्यमान क्रमश: 11.3 और 12.3 तथा प्रामाणिक विचलन क्रमश: 5.45 और 5.95 पाया गया। मध्यमानो के क्रांतिक अनुपातों का मान ज्ञात करने पर 1.25 पाया गया, जो t-table से 1% विश्वास स्तर पर 2.60 के मान से कम है। अर्थात् परिकल्पना क्रमांक-2 के तुलनात्मक प्रतिदर्शों में सार्थक अन्तर नहीं पाया गया। अत: परिकल्पना क्रमांक – 2 अस्वीकृत की जाती है।

कारण

ग्रामीण क्षेत्र की छात्राओं के माता-पिता अपने बच्चों को उनकी परिस्थिति के अनुसार सुविधायें देते हैं। साथ ही इन छात्राओं के आगे बढ़ने का कारण योगाभ्यास है। उसी स्थान पर शहरी क्षेत्र की छात्राओं में आत्मविश्वास का सबसे बड़ा कारण परिवार का वातावरण है।

परिकल्पना क्रमांक – 3

हाईस्कूल स्तर पर अध्ययनरत शहरी क्षेत्र की योगाभ्यास नहीं करने वाली छात्राओं की संवेगात्मक परिपक्वता का आत्मविश्वास पर धनात्मक प्रभाव पाया जायेगा।

उपर्युक्त परिकल्पना के सत्यापन के लिए शहरी छात्राओं की संवेगात्मक परिपक्वता का आत्मविश्वास के प्राप्तांक के मध्य स्केटर डायग्राम विधि (two- way frequency method) से सहसम्बन्ध गुणांक की गणना की गई है। सहसम्बन्ध गुणांक की गणना करने पर 0.010 (धनात्मक नगण्य सहसम्बन्ध) प्राप्त हुआ। चूँकि धनात्मक दिशा में नगण्य सहसम्बन्ध प्राप्त हुआ है, इसलिए यह परिकल्पना क्रमांक 3 को स्वीकृत किया जाता है।

कारण

1. शहरी छात्राओं की आर्थिक स्थिति साधारण होने के कारण आत्मविश्वास का स्तर व संवेगात्मक परिपक्वता धनात्मक नगण्य होगी।
2. शहरी छात्राओं का पारिवारिक वातावरण अच्छा होने के कारण संवेगात्मक परिपक्वता का आत्मविश्वास पर धनात्मक प्रभाव पाया गया है।

परिकल्पना क्रमांक – 4

हाईस्कूल स्तर पर अध्ययनरत ग्रामीण छात्राओं की संवेगात्मक परिपक्वता पर आत्मविश्वास का धनात्मक प्रभाव पाया जायेगा।

उपर्युक्त परिकल्पना के सत्यापन के लिए ग्रामीण छात्राओं की संवेगात्मक परिपक्वता का आत्मविश्वास के प्राप्तांक के मध्य स्केटर डायग्राम से सहसम्बन्ध

गुणांक की गणना की गई है। सहसम्बन्ध गुणांक की गणना करने पर 0.26 (निम्न धनात्मक सहसम्बन्ध) प्राप्त हुआ। अत: परिकल्पना क्रमांक – 4 स्वीकृत की जाती है।

कारण

1. ग्रामीण छात्राओं की आर्थिक स्थिति अच्छी होने के कारण आत्मविश्वास का स्तर व संवेगात्मक परिपक्वता धनात्मक निम्न होगी।
2. ग्रामीण छात्राओं का पारिवारिक वातावरण अच्छा एवं दैनिक जीवन में यौगिक क्रियाओं के कारण संवेगात्मक परिपक्वता का आत्मविश्वास पर धनात्मक प्रभाव पाया गया है।

परिकल्पना क्रमांक – 5

हाईस्कूल स्तर पर अध्ययनरत शहरी क्षेत्र की योगाभ्यास नहीं करने वाली छात्राओं की संवेगात्मक परिपक्वता के आत्मविश्वास पर पड़ने वाले प्रभाव एवं ग्रामीण क्षेत्र की योगाभ्यास करने वाली छात्राओं की संवेगात्मक परिपक्वता के आत्मविश्वास पर पड़ने वाले प्रभाव में अन्तर पाया जायेगा।

उपर्युक्त परिकल्पना के सत्यापन के लिए ग्रामीण एवं शहरी छात्राओं की संवेगात्मक परिपक्वता एवं आत्मविश्वास के मध्य सहसम्बन्ध गुणांको की गणना की गई है।

सारणी क्रमांक – 3

ग्रामीण एवं शहरी छात्राओं की संवेगात्म्क परिपक्वता एवं आत्मविश्वास के मध्य सहसम्बन्ध मध्य सह-सम्बन्ध गुणांक –

क्र.सं.	प्रतिदर्श	संबंधित चर	सह-संबंध गुणांक
1	शहरी छात्राएँ	संवेगात्मक परिपक्वता एवं आत्म-विश्वास के मध्य सह-संबंध गुणांक	r = 0.01
2	ग्रामीण छात्राएँ	संवेगात्मक परिपक्वता एवं आत्म-विश्वास के मध्य सह-संबंध गुणांक	r = 0.26

हाईस्कूल स्तर पर अध्ययनरत शहरी एवं ग्रामीण छात्राओं की संवेगात्मक परिपक्वता का आत्मविश्वास पर पड़ने वाले प्रभाव का सहसम्बन्ध गुणांक r = 0.01 तथा r = 0.26 प्राप्त हुआ है, तथा C. R. का मान 2.54 है, जो 5% विश्वास स्तर पर C. R. के मान 2.58 से कम है। चूँकि इस तुलना में सार्थक अन्तर नहीं पाया गया है, अत: परिकल्पना क्रमांक – 5 अस्वीकृत की जाती है।

कारण

1. ग्रामीण क्षेत्र में विद्यालयों में अनेक सुविधायें होती हैं, जैसे योगाभ्यास, टी.वी., सांस्कृतिक कार्यक्रम, खेलकूद, समाचार-पत्र, पत्रिकायें, पुस्तकालय, एन. सी.सी. आदि, जिसकी वजह से संवेगात्मक परिपक्वता का आत्मविश्वास पर अन्तर नहीं पाया गया है।
2. शिक्षक तथा स्कूल का वातावरण छात्राओं के दृष्टिकोणों को परिवर्तित करते हैं, इसलिए संवेगात्मक परिपक्वता का आत्मविश्वास पर कोई प्रभाव नहीं पाया गया।

निष्कर्ष

प्रस्तुत योगाभ्यास शोध के अध्ययन में ग्रामीण और शहरी छात्राओं की संवेगात्मक परिपक्वता में सार्थक अन्तर पाया गया है, किन्तु आत्मविश्वास के स्तर में कोई अन्तर नहीं पाया गया।

सुझाव

ग्रामीण एवं शहरी छात्राओं के लिए योगाभ्यास या यौगिक क्रियाओं का होना उतना ही महत्त्वपूर्ण है, जितना कि हमारे जीवन में शिक्षा का, जिससे कि विद्यार्थी अपने व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास कर पूर्णता की प्राप्ति कर सकें।

दुनिया की नियति नन्हें, निर्दोष बच्चों पर निर्भर है। अगर तुम अंधेरी निशा में आशा की किरण देखना चाहते हो तो बड़े-बूढ़ों की बजाय इन बच्चों को अध्यात्म की ओर उन्मुख करना होगा।

– स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

कल्पतरु की छाँव में

स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती

योगासन के समय क्या इष्ट का जप किया जा सकता है?

योग शास्त्रों में अनेक विधियाँ बतलायी गयी हैं, जिनके द्वारा हम आसन करते समय स्वयं को अपने शरीर के भीतर केन्द्रित कर सकें, क्योंकि आसनों का अभ्यास यंत्रवत् नहीं करना चाहिए। यंत्रवत् तो हम अपने शरीर को दिनभर हिलाते रहते हैं। यंत्रवत् हम पलके खोलते-बन्द करते रहते हैं, श्वास लेते हैं। अनेक प्रकार की शारीरिक क्रियाएँ यंत्रवत् होती रहती हैं। अभी मैं जो बोल रहा हूँ, वह भी यंत्रवत् ही बोल रहा हूँ। सोचकर नहीं बोल रहा हूँ कि मुझे यह बोलना है।

लेकिन आसनों के अभ्यास में, जहाँ सजगता की वृद्धि चाहिए, उस समय यंत्रवत् अवस्था को अलग करना पड़ता है। जहाँ पर सजगता हो, सतर्कता हो वहाँ पर यंत्रवत् क्रिया समाप्त होनी चाहिए। आसनों की पहली शर्त यही है कि हम अपनी शारीरिक अवस्था के प्रति जागरूक रहें।

जब आप अपनी अवस्था के बारे में जागरूक हो जाते हैं, जब आपको अपने शरीर का ज्ञान होने लगता है, तब फिर आप आसनों से अपने मन को अलग कर सकते हैं। लेकिन प्रारम्भ में मन और शारीरिक स्थिति, दोनों एक होने चाहिए। तभी आसन सिद्ध होता है।

आसन की परिभाषा है – *'स्थिरं सुखं आसनम्।'* स्थिरता और सुखद अवस्था तक आने के लिए आसनों के विभिन्न अंग हैं। पहले केवल गत्यात्मक आसन होते हैं, ताकि हमारा शरीर लचीला हो जाए। उसके बाद दूसरे प्रकार के आसन होते हैं, ताकि हमारी आन्तरिक अव्यवस्था दूर हो जाए, रोग दूर हो जाएँ। उसके बाद तीसरी अवस्था आती है, जब हम अपने शरीर का अवलोकन करके स्वयं को स्थिर बनाने का प्रयत्न करते हैं। और लम्बी अवधि तक उस स्थिरता को धारण करने का प्रयत्न करते हैं।

योग शास्त्र के अनुसार आसनों का प्रयोजन होता है आपको ध्यानावस्था में प्रवेश कराना। अगर हम ध्यान कर रहे हों और घुटनों में दर्द होने लगे तो हमारा ध्यान टूट जाएगा न? दर्द की तरफ ध्यान चला जाएगा। अगर आप योग शास्त्रों का अध्ययन करें, चाहे हठयोग प्रदीपिका हो, घेरण्ड संहिता हो, या अन्य कोई शास्त्रीय पारम्परिक ग्रंथ हो, उनमें बतलाया गया है कि योगाभ्यास को किस अवस्था में, किस परिसर में करना चाहिए। योगाभ्यास करते समय वातावरण किस प्रकार का होना चाहिए। योगाभ्यास बन्द कमरे में नहीं करना चाहिए। हवा का प्रवाह हो, लेकिन एकदम

खुले स्थान में भी नहीं करना चाहिए, जहाँ पर हवा का झोंका लग जाए। इस प्रकार अनेक नियम हैं। आसन का भी एक नियम है, आसन सही होना चाहिए। लेकिन सही स्थिति तक आने के लिए, अपने आपको, मन को, चित्त को शारीरिक स्थिति के साथ जोड़ने के लिए भिन्न-भिन्न प्रक्रियाओं को अपनाना पड़ता है। और इसको कहते हैं शरीर और मन का समन्वय, जिससे संवेदनशीलता की वृद्धि होती है।

इन प्रक्रियाओं में से एक है आसन करते समय श्वास पर ध्यान करना। दूसरी प्रक्रिया है जिस आसन में जो चक्र प्रभावित होता है उस पर ध्यान करना। तीसरी प्रक्रिया है आसन में मंत्र जप करना। साधक की क्षमता के अनुसार इस प्रकार के अन्य तरीके भी बतलाए जाते हैं।

हृदय रोग, अनिद्रा और उच्च रक्तचाप के लिए कौन-से अभ्यास हैं?

इस प्रश्न में हृदय रोग, अनिद्रा और उच्च रक्तचाप की चर्चा की गयी है, और इन तीनों के लिए जो अभ्यास बतलाए जाते हैं वे एक-दूसरे के पूरक हैं। हृदय रोग तथा उच्च रक्तचाप की स्थिति में कुछ ऐसे सरल अभ्यासों को करना चाहिए जिनसे हमारे आन्तरिक

अंगों की कार्य-प्रणाली में विश्राम की स्थिति उत्पन्न हो। अगर योगाभ्यास द्वारा अंगों में तनाव की उत्पत्ति होती है तो हमारे अभ्यास ठीक नहीं हैं, ऐसा मान लेना चाहिए। इसी उद्देश्य से उच्च रक्तचाप तथा हृदय रोग में योगनिद्रा का निर्देश दिया जाता है।

योगनिद्रा का अभ्यास एक विचित्र अभ्यास है। अपनी आँखों देखा एक उदाहरण आपको बतलाते हैं। जब वियतनाम में युद्ध हो रहा था, तब वहाँ के सेना प्रमुख ने अपनी यूनिट के साथ कैंप डाला था। एक दिन वे जंगल में पेट्रोलिंग कर रहे थे। रात्रि के समय स्काउटिंग के लिए थोड़ा आगे निकल गए। पीछे से आक्रमण हुआ और यूनिट के जितने लोग निद्रा में थे, सबको चाकू मार दिया गया। जब वे वापस लौटे तो उन्होंने देखा कि उनके सभी सैनिक मृत्यु को प्राप्त हो चुके हैं। उस समय उन्हें सदमे के कारण बहुत जबरदस्त हृदयाघात हुआ, क्योंकि वे उनकी रक्षा नहीं कर सके थे। ये सैनिक अठारह-उन्नीस साल के युवक ही थे।

उन्हें ऑस्ट्रेलिया के एक अस्पताल में भेजा गया। वहाँ पर आश्रम के एक संन्यासी योग की कक्षा ले रहे थे। सेना अधिकारी को योग के बारे में जानने की रुचि हुई। उन्होंने पूछा कि मेरे जीवन में ऐसी घटना हुई है, इसके लिए मैं क्या कर

सकता हूँ। संन्यासी ने कहा कि सबसे पहले आप योगनिद्रा का अभ्यास कीजिए, और फिर दो प्राणायामों का अभ्यास कीजिए। उन्होंने देखा कि योगनिद्रा के अभ्यास से बहुत जल्दी स्वास्थ्य लाभ होने लगा, और कुछ ही समय पश्चात् वे अस्पताल से छुट्टी पाकर पुन: अपने काम पर आ गए।

जब हृदयाघात होता है तो ई.सी.जी. में उसके चिह्न दिखलायी पड़ते हैं। लेकिन उनके जितने ई.सी.जी. लिए गए, किसी में भी इस हृदयाघात के चिह्न दिखलायी नहीं दिए थे। इतना ही नहीं, वे अब तक छ: हृदयाघात झेल चुके हैं। ऐसी मान्यता है कि तीसरे के बाद आदमी जीवित नहीं रहता। वे कहते हैं कि मेरे जीवित रहने का पूरा श्रेय योगनिद्रा को जाता है, और मुझमें इतना आत्मविश्वास आ गया है कि छ: तो क्या, अगर मुझे छ: सौ हृदयाघात भी हो जाएँ तो मैं जीवित रहूँगा।

उनके जीवन में योगनिद्रा की प्रत्यक्ष करामात हमलोगों को दिखलायी देती है। समझ में नहीं आता, लेकिन चिन्तन से इतना अन्दाज तो जरूर लगता है कि जैसे-जैसे हम अपने आन्तरिक अंगों को, आन्तरिक कार्य-प्रणाली को तनावमुक्त करते हैं, और उनमें सुधार होता है, वैसे-वैसे उनकी क्षमता, उनकी शक्ति में वृद्धि होती है। और यह जो असन्तुलन की स्थिति है शरीर की, जिसका एक प्रमाण है उच्च रक्तचाप, वह दूर होने लगती है।

इन समस्याओं के निदान के लिए दो और अभ्यास बहुत उपयोगी हैं। पहला, भ्रामरी प्राणायाम, कानों को बन्द कर गुंजन की आवाज करना। दूसरा, उज्जायी प्राणायाम। जिस प्रकार से एक छोटा बच्चा गहरी निद्रा की अवस्था में गहरी श्वास खींचता है, ठीक उसी प्रकार उज्जायी प्राणायाम में श्वास में उत्पन्न आवाज पर ध्यान को केन्द्रित किया जाता है।

अनिद्रा के उपचार के लिए योगनिद्रा का अभ्यास करना चाहिए। साथ-साथ एक बात और ध्यान में रखना कि जब बिस्तर में जाते हो तो अपने झंझटों को साथ लेकर मत जाना। अपने झंझटों और परेशानियों को बिस्तर में लेकर जाओगे तो वे तुम्हारे मन को विचलित कर देंगी, और एक बार मन विचलित हो उठे तो निद्रा ठीक ढंग से नहीं आती। आपने तो अपने जीवन में अनुभव किया होगा कि रात्रि के समय जब कभी तेजी से और बहुत प्रबलता से विचार उत्पन्न होते हैं तो नींद गायब हो जाती है। बहुत देर तक हम मात्र करवट बदलते रहते हैं। यह मानसिक विचलन की अवस्था है। इसलिए जब हम रात्रि को सोने के लिए जाते हैं, तो उस समय इतना प्रयास अवश्य रहे कि हम किसी ऐसे विचार को अपने साथ लेकर न जाएँ, जिससे हमारा मन विचलित हो जाए। मन को विचलित करने वाले विचार होते हैं घरेलू झंझट, कार्य-क्षेत्र के झंझट इत्यादि-इत्यादि।

अगर आप निद्रा के समय बिस्तर में लेटकर योगनिद्रा का अभ्यास करें, तो मन को स्वत: दूसरी तरफ मोड़ पायेंगे। मन को विचलित होने से रोककर एक प्रक्रिया

में केन्द्रित कर देने से, एक प्रक्रिया में स्वयं को रमाने से, स्वयं को अन्तर्मुखी बना देने से निद्रा अवश्य आती है।

एक बार दक्षिण अमेरिका में हमारे पास एक आदमी आया और कहने लगा कि स्वामीजी, पिछले छ:-सात सालों से अनिद्रा से पीड़ित हूँ। बिल्कुल सो नहीं पाता हूँ। प्रशान्तक दवाइयाँ लेता हूँ, नींद की गोलियाँ लेता हूँ, लेकिन नींद नहीं आती। मानसिक विखण्डता की स्थिति उत्पन्न हो गयी है, मैं क्या करूँ? हमने कहा कि आप योगनिद्रा में सोइये। हम आपको करा देते हैं।

हमने उस व्यक्ति को डेढ़ घंटे तक योगनिद्रा करायी। पहले दिन तो कुछ नहीं हुआ। हमने कहा फिर आना। दूसरे दिन भी हमने उसे डेढ़ घंटे तक योगनिद्रा करायी, और उस समय वह जो सोया तो पूरे सत्रह घंटे बाद उठा। उसने कहा कि इतनी अच्छी नींद मुझे जिन्दगी में पहले कभी नहीं आयी थी। तो अनिद्रा के लिए भी योगनिद्रा का अभ्यास उपयोगी है, क्योंकि इसके माध्यम से हम अपने मन को विचलित होने से रोक कर, उसे केन्द्रित करके विश्राम की स्थिति में ले आते हैं।

यह बताएँ कि आँखों के कमजोर होने पर क्या वह दृष्टि फिर से प्राप्त की जा सकती है? अगर हाँ, तो कैसे?

आँखों की दृष्टि को वापस लाने के लिए, चश्मा उतारने के लिए योग में कुछ अभ्यास बतलाए जाते हैं। इनका उल्लेख हमारे आश्रम से प्रकाशित योग साहित्य में किया गया है। ये अभ्यास आँखों की मांसपेशियों को शक्ति प्रदान करते हैं, उनकी कमजोरियों को दूर करते हैं।

जब मांसपेशियों की थकान तथा कमजोरी दूर हो जाती है तब दृष्टि वृद्धि के लिए एक दूसरी विधि का अभ्यास करते हैं, जिसका नाम है त्राटक। इसमें मोमबत्ती या दीपक की लौ को बिना पलक झपकाए एकटक देखते हैं, और कुछ समय बाद जब आँखें गरम हो जाएँ, आँसू निकलने लगें, आप आँखों को और खुला न रख सकें, तब उन्हें बंद कर लेना चाहिए। भ्रूमध्य में उस ज्योति का जो प्रतिबिम्ब दिखलायी देता है, उस पर अपने ध्यान को केन्द्रित करना चाहिए। और जब तक वह आंतरिक प्रतिबिम्ब गायब नहीं होता, उसे देखते रहना है। जब वह गायब हो जाए तब आँखों को खोलकर पुन: इस अभ्यास को दुहराना चाहिए। इसे सामर्थ्य भर दुहराना चाहिये, धीरे-धीरे।

तीसरा अभ्यास है नेति क्रिया। एक नासिका छिद्र से पानी लेकर दूसरे से बाहर निकालना। इसके लिए एक टोंटी वाला लोटा होता है। कुनकुना पानी लेकर थोड़ा-सा नमक डाल कर, मुँह से श्वास लेते हुए, सिर को सामने झुकाकर और टेढ़ा करके टोंटी को एक नासिका में घुसाते हैं, और पानी अपने ही आप प्रवाहित होकर दूसरी नासिका से निकलता है। जैसे-जैसे पानी अन्दर जाता और बाहर निकलता है, वैसे-

वैसे नासिका के भीतर की मांसपेशियाँ और नसें संवेदनशील हो उठती हैं। उनमें स्पन्दन की उत्पत्ति होती है। और जब स्नायविक क्रियाशीलता बढ़ती है तब आँखों की ज्योति पुन: वापस आ जाती है। हमने देखा है कि इन तीनों अभ्यासों से कुछ सालों के भीतर ही चश्मा पूरी तरह से उतर जाता है।

क्या चर्म रोग एवं एलर्जी के लिए योग में कोई उपचार है?

एलर्जी तो बहुत प्रकार की होती है, लेकिन एलर्जी को दूर करने के लिए जो सहज उपाय हमारे सामने हैं, उनमें एक तो नेति ही है। नासिका सम्बन्धी एलर्जी या श्वसनक्रिया सम्बन्धी एलर्जी, जैसे, धूल, मौसम में आर्द्रता और वातावरण में प्रदूषण के कारण होने वाली एलर्जी नेति क्रिया से दूर हो जाती है।

दूसरे प्रकार की एलर्जी का सम्बन्ध आहार से रहता है। जैसे कभी-कभी हम कुछ खा लेते हैं, और उसका हमारे शरीर पर हानिकारक प्रभाव पड़ता है। ऐसी एलर्जी में कुंजल क्रिया करनी चाहिए। खाली पेट पानी पीकर फिर उसे बाहर निकाल देना। यह बहुत कामयाब अभ्यास है। इसके साथ-ही-साथ प्रतिरक्षा तन्त्र की क्षमता को बढ़ाने के लिए कुछ अभ्यास किए जाते हैं, जिनमें प्रमुख अभ्यास हैं – सूर्यनमस्कार, कपालभाति एवं नाड़ी शोधन प्राणायाम। इतने अभ्यासों से सभी प्रकार की एलर्जी दूर हो सकती है।

जो चर्म रोग होते हैं, जैसे एग्ज़िमा, सुरायसिस इत्यादि, उनके लिए हम लोग योग में सबसे पहला काम कराते हैं पेट की सफाई, क्योंकि ऐसा पाया गया है कि जितने चर्म रोग हैं उनका मुख्य कारण हमारा पाचन-संस्थान है। अगर आहार ठीक तरीके से नहीं पचता, या मल का निष्कासन ठीक तरीके से नहीं होता, या जिगर और गुर्दे द्वारा विषाक्त तत्त्वों का निष्कासन ठीक से नहीं होता तो चर्म रोग होते हैं। इसलिए पहला काम हम लोग कराते हैं पेट की सफाई, और फिर प्रतिरक्षा तन्त्र की क्षमता को बढ़ाने के लिए अन्य अभ्यास कराए जाते हैं, जिनमें सूर्य नमस्कार प्रमुख है।

सिर में हमेशा दर्द बना रहता है, क्या यह दर्द दूर हो सकता है?

अवश्य दूर हो सकता है। नेति के द्वारा आप इस दर्द को दूर कर सकते हैं, और प्राणायाम के अभ्यास द्वारा भी। बहुत बार दर्द का कारण जानना आवश्यक होता

है, क्योंकि कभी-कभी दर्द हमारी शारीरिक स्थिति के कारण भी हो जाता है। आप लोगों का अनुभव होगा कि जो लोग टेबल-कुर्सी पर बैठकर काम करते हैं, उनके कंधे कड़े हो जाते हैं और धीरे-धीरे सिर भारी होने लगता है।

अगर दोषपूर्ण शारीरिक स्थिति के कारण सिरदर्द होता है तो कुछ सरल अभ्यास करने आवश्यक हैं, जैसे, पवनमुक्तासन के अभ्यास, ताकि शारीरिक तनाव दूर हो जाए। गर्दन और कंधों की मांसपेशियाँ, जो एक स्थिति में होने के कारण कड़ी हो जाती हैं, उनका कड़ापन दूर हो जाए। और जिस समय कड़ापन दूर होगा, सिरदर्द दूर हो जाएगा।

अगर तनाव के कारण सिरदर्द होता है तो प्राणायाम, विशेषकर भस्त्रिका और भ्रामरी प्राणायाम से तथा नेति क्रिया से ठीक हो सकता है।

कद बढ़ाने के लिए कौन-सा उपाय इस्तमाल किया जाए?

ऊँचाई बढ़ाने के लिए, विशेषकर बच्चों के लिए, दो प्रमुख अभ्यास हैं। पहला अभ्यास है सर्वांगासन। बच्चों में इसका ज्यादा लाभ दिखलायी देता है। सर्वांगासन में, गर्दन में स्थित थायराइड और पैराथायराइड ग्रन्थियाँ, जो शारीरिक विकास को नियन्त्रित करती हैं, प्रभावित होती हैं, और सुचारु रूप से काम करती हैं, जिससे सामान्य ऊँचाई प्राप्त होती है।

इसके पश्चात् दूसरा अभ्यास है ताड़ासन। ताड़ासन से सभी मांसपेशियों का विस्तार होता है। कद बढ़ाने के लिए ये दो अभ्यास अच्छे माने गए हैं।

– अखिल भारतीय योग सम्मेलन, जबलपुर, 1994

योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट

यौगिक जीवन

स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती

पृष्ठ 74, ISBN: 978-93-81620-69-4

'हम योग को मात्र एक अभ्यास नहीं मानते, बल्कि 'निरंजनानंद योग संहिता' में योग को चार श्रेणियों में विभाजित किया गया है– अभ्यास, साधना, जीवनशैली और संस्कृति। हम योग को इन्हीं चार रूपों में देखते हैं, और यही योग के विकास का स्वाभाविक क्रम भी है।'

अगस्त 2011 में गंगा दर्शन विश्व योगपीठ में स्वामीजी द्वारा दिये गये सत्संगों का विषय दैनिक जीवन में योग का समावेश था। स्वामीजी ने मनुष्य जीवन में योग की भूमिका और प्रयोजन पर प्रकाश डालते हुए समझाया कि शरीर, मन और आत्मा के समन्वित विकास के लिए विभिन्न योग प्रणालियों को जीवन में किस प्रकार संयोजित किया जा सकता है।

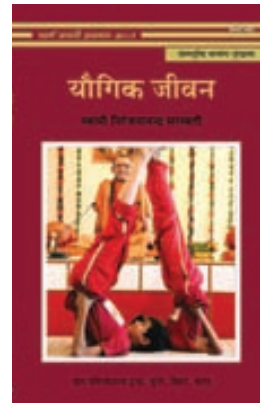

नया प्रकाशन

पुस्तकों की मूल्य सूची एवं क्रयादेश प्रपत्र प्राप्त करने के लिए सम्पर्क करें–
योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, गंगा दर्शन, फोर्ट, मुंगेर, बिहार 811201

दूरभाष : 91-6344-222430, 6344-228603, 09304799615 फैक्स : 91-6344-220169

कृपया जवाब के लिए अपना पता लिखा, डाकटिकट लगा लिफाफा भेजें, जिसके बिना आपके आवेदन पर विचार नहीं किया जाएगा।

सत्यानन्द योग वेबसाइट

www.biharyoga.net

यह बिहार योग पद्धति की मुख्य वेबसाइट है जिसमें बिहार योग विद्यालय, बिहार योग भारती, शिवानन्द मठ, सीता कल्याणम् महोत्सव तथा योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट की जानकारियाँ उपलब्ध हैं।

www.rikhiapeeth.net

इस वेबसाइट पर प्रतिदिन श्री स्वामी सत्यानन्द सरस्वती का विभिन्न आध्यात्मिक विषयों पर एक नया सत्संग उपलब्ध रहता है।

'यौगिक जीवन' स्वामी निरंजन के संग

www.biharyoga.net/living-yoga/ पर श्री स्वामी सत्यानन्द सरस्वती के उत्तराधिकारी स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती के मिशन सम्बन्धी लेख, संदेश एवं समाचार उपलब्ध हैं।

www.yogamag.net

योगा पत्रिका के लेखों के संग्रह तथा पूरे विश्व में सत्यानन्द योग केन्द्रों और शिक्षकों के सम्पर्क सूत्रों और गतिविधियों की जानकारी के लिए इस वेबसाइट को देखें।

आवाहन वेबसाइट

www.biharyoga.net/sannyasa-peeth/avahan/ पर संन्यास पीठ की द्वैमासिक पत्रिका, *सत्य का आवाहन* उपलब्ध है, जिसमें श्री स्वामी शिवानन्द, श्री स्वामी सत्यानन्द एवं स्वामी निरंजनानन्द की शिक्षाओं तथा संन्यास पीठ की गतिविधियों की जानकारी है।

- Registered with the Department of Post, India Under No. HR/FBD/298/13-15
- Registered with the Registrar of Newspapers, India Under No. BIHHIN/2002/6306

issn 0972-5725

गंगादर्शन के सत्र एवं कार्यक्रम 2014

जनवरी 1	श्री हनुमान चालीसा
फरवरी 1-4	श्री यंत्र आराधना
फरवरी 1-मई 25	चातुर्मासिक योग अध्ययन सत्र (हिन्दी)
फरवरी 4	बसंत पंचमी महोत्सव बिहार योग विद्यालय का स्थापना दिवस
फरवरी 14	बाल योग दिवस
मार्च 1-21	योग शिक्षक प्रशिक्षण सत्र (हिन्दी)
मार्च 3-20	योग स्वास्थ्य रक्षा सत्र–दमा (हिन्दी)
अप्रैल 3-20	योग स्वास्थ्य रक्षा सत्र–मधुमेह (हिन्दी)
जून 1-अगस्त 25	त्रैमासिक योग विज्ञान और जीवनशैली सत्र (हिन्दी)
जुलाई 12	गुरु पादुका पूजन
अगस्त 2014-मई 2015	योग अध्ययन में डिप्लोमा (अँग्रेजी)
अगस्त 1-21	योग शिक्षक प्रशिक्षण सत्र (अँग्रेजी)
अगस्त 3-20	योग स्वास्थ्य रक्षा सत्र–गठिया एवं पीठदर्द (हिन्दी)
सितम्बर 3-20	योग स्वास्थ्य रक्षा सत्र–सामान्य (हिन्दी)
सितम्बर 8	स्वामी शिवानन्द जन्मोत्सव
सितम्बर 12	स्वामी सत्यानन्द संन्यास दिवस
अक्टूबर 1-जनवरी 25	चातुर्मासिक योग अध्ययन सत्र (अँग्रेजी)
दिसम्बर 25	स्वामी सत्यानन्द जन्म दिवस
प्रत्येक शनिवार	महामृत्युंजय हवन
प्रत्येक एकादशी	भगवद् गीता पाठ
प्रत्येक पूर्णिमा	सुन्दरकाण्ड पाठ
प्रत्येक माह के 5 वें और 6 वें दिवस	श्री स्वामी सत्यानन्द जी की महासमाधि का स्मरणोत्सव
प्रत्येक माह के 12 वें दिवस	अखण्ड रामचरितमानस पाठ

उपर्युक्त सत्रों/ कार्यक्रमों के सम्बन्ध में विशेष जानकारी के लिए सम्पर्क करें–

बिहार योग विद्यालय, गंगादर्शन, मुंगेर, बिहार 811201

फोन : 06344-222430, 06344-228603, 9304799615 फैक्स : 06344-220169

वेबसाइट : www.biharyoga.net

✉ अन्य किसी जानकारी हेतु अपना पता लिखा और डाक टिकट लगा हुआ लिफाफा भेजें, जिसके बिना उत्तर नहीं दिया जायेगा।